

शारिका-बोध



श्री सत्तचिदानन्द जी

१९७९

सम्पादक—
ईश्वर - आश्रम
गुप्तगंगा, काश्मीर।

दो शब्द



शक्तिमान गुरुओं की महिमा जानी नहीं जाती। जिस निकटवर्ती शिष्य की वे सबों के सम्मुख अवहेलना करते रहते हैं, उसी को भीतर से महान् बनने का अवकाश भी देते हैं। इसका अनुभव हमें प्रत्यक्ष रूप से इस पुस्तिका को देख कर हुआ। हमारे आश्रम में लगभग १९५७ संवत में श्री महात्मा मंगत राम जी के अन्तिम शिष्य श्री सत्तचिदानन्द जी आये। वे इस आश्रम में तीन - चार मास रह कर पुनः अपने आश्रम जगादरी लौटते थे। कई वर्ष इसी भान्ति उनका आना जाना बना रहता था। गत् वर्ष न जाने कैसे और किस भगवत् प्रेरणा के फलस्वरूप वे यहाँ दो - तीन मास के लिए आये। उनके हृदय में गुरु-महाराज की कृपा से सरस्वती देवी ने प्रवेश किया। उन्होंने भगवती, वैराग्य-संपन्न योगिनी सुश्री 'शारिका' जी के नाम से यह ग्रन्थ छपवाने की प्रेरणा की। उन्होंने यह भी कहा कि मैं महाराज जी तथा देवी शारिका जी के सद्व्यवहार का आभार चुकाना चाहता था। अतः इस पुस्तिका में गुरु तथा शिष्य के पारस्पारिक सम्भाषण से जहाँ उनके पारमार्थिक भावों का विशदीकरण होगा, वहां जनता के सम्मुख सद्भावनाओं का प्रकाश होने से उनका भी मानसिक लाभ होगा। इसी हेतु हमारा भी आभार चुक जायेगा। अतः यह छोटी सी पुस्तिका उनके उद्‌गारों की देन है। हमें आशा है जनता इस उपयोगी पुस्तिका का आदर करेगी और इस से अपने मानसिक विचारों को निर्मल बनाने का प्रयास करेगी।

ॐ शान्तिः। शान्तिः। शान्तिः।

मई, १९७९

गुरु महाराज की चरण-रज

प्रभा

श्री गुरु–कृपा

श्री
शारिका बोध–ग्रन्थ।

मंगलाचरण

नमस्कार चिदानन्द-स्वरूप को जो घट-घट रिहा व्याप।
सर्वव्यापक अन्तर्यामी कल्याण-स्वरूप प्रभु आप ॥१॥
माया भ्रम विकार से जो रहत सदा निर्लेप।
अजर अमर तत्त्व - स्वरूप निरालम्ब सदा-सदा निर्विक्षेप ॥२॥
जीवित और निर्जीवित का तू आप शिव भर्तार।
तुद चरण शरण में 'शारिका' करत बारं बार नमस्कार ॥३॥

प्रार्थना

नारायण पुरुष निरंजना निराकार निर्भेव।
विनय करत है 'शारिका' तुद चरणी गुरुदेव॥
ना विद्या ना तप बल ना तीरथ व्रत गाथ।
ना कोऊ साधन योग जुगत मैं निर्बुद्धि अनाथ॥
मैं शरणागत हूं प्रभु, राखो चरण अधार।
जाल व्याल जम डेरा चूके तुद कृपा पावूं सुख-सार॥

शक्ति मुक्ति कछु नहीं चाहूं ना सुख भोग संसार।
जन्म जन्म मोहे दीजिये निज भक्ति गुरु दातार ॥
प्रस्तुत कीरत महिमा तोरी मेरे रोम रोम परकाशे ।
'शारिका' की यही वेनती सुन ईश्वर-स्वरूप अविनाशी ॥

गुरु महिमा

गुरु-महिमा अपरंपार है मुख से कथी न जाय ।
वेद-ग्रन्थ गुनी गा गा हारे रंचक पार न पाय ॥१॥
सर्व धरत कागद करूं लेखनी सकल वनराय।
सप्त-सागर मसी बने गुरु-महिमा लिखी न जाय ॥२॥
महिमा गुरु की अपार है अलख अलेख अनूप ।
रोम रोम जब हो रसे प्रगटे आनन्द-स्वरूप ॥३॥
गुरु दाता दातार है शिष्य भिखारी जान।
दुविधा दुर्मत मेट के करें जीव कल्याण ॥४॥
लक्ष्मण गुरु-समरथ है, सर्व शक्त भरपूर।
तिनकी दया दृष्टि ते, भव-बंधन होवे चूर। ५॥
आसा पूर्ण मनसा पूर्ण पूर्ण हों सब काम।
गुरु ईश्वर-स्वरूप शरणागति, 'शारिका' भई निहकाम ॥६॥
गुरु बिन पूजा जप-तप गुरु बिन करते ध्यान।
गुरु बिन तीरथ बरत सब, नहिं रंचक होत कल्याण ॥७॥
गुरु माता गुरु पिता, गुरु देवन का देव।
गुरु साक्षात् परमात्मा, कोइ गुरु मुख जाने भेव ॥८॥

गुरु बिन ज्ञान ध्यान नहि, गुरु बिन योग न होय।
बिन गुरु गम्र ज्ञान के, व्यर्थ जीवन खोय ॥९॥

हरी का बांधा जीवडा, साहिब गुरु छुडाय।
गुरु-बांधव छूटत नहीं, कोटन करो उपाय ॥१०॥

गुरु-समरथ शरणागति, गुरु मुख पाये सुख-सार।
गुरु बिन दाता है नहीं, जो भव से करे निस्तार ॥११॥

गुरु दीपक ही जानिये, शिष्य अंधियारा महल।
निज रंचक दया-दृष्टि ते, घट होत भान विमल ॥१२॥

अन्तर बाहर होये चांदना, रज-तम मिटे अन्धेरा।
ज्ञान भानु परकाशे, उठ साजन नित सवेरा ॥१३॥

गुरु वसिष्ठ की शरणागत, भयो रामचन्द्र अवतार।
युगन युग महिमा गावते, सब नर-नारी संसार ॥१४॥

दुर्वाषा के संग से, श्री कृष्ण परम योगीश्वर भयो।
गुनी मुनी सब कीरत ध्यायें भगवान पदवी लेयो ॥१५॥

मुनी नारद जीवर गुरु कीना, भरम भयो सब नाश।
इच्छाचारी सिद्धगत लीनी, कियो वाल्मीक घट प्रकाश ॥१६॥

गुरु को महिमा अपार है, गुरु कीतर अपरंपार।
सुखदेव का भय भरम विनासा, जनक विदेह आधार ॥१७॥

गुरु लक्ष्मण ईश्वर-स्वरूप है, नही गत मित वरणी जाय।
जो जो आया तिन शरणागती, सो सो परम सुख पाय ॥१८॥

कहनी कथनी से परे, गुरु का साचा धाम।
'शारिका' सर्व समर्पण भाव से, श्री चरणी करे विश्राम ॥१९॥

भूख मिटे सुख-सार पाये, जो गुरु चरण-शरण लव लाये।

'शारिका' जन्म-मरण का फंद विनासे, परम धाम पद पाये ॥२०॥
गुरु परमेश्वर आप है, घट-घट करे परगास।
'शारिका' गुरु-मुख होय के, यह परसो भेद सुख-रास ॥२१॥
मैं बलिहारी लक्ष्मण गुरु चरणी, जो साक्षात् शिव-स्वरूप।
'शारिका' घट परगासिया, ज्ञान भानु अनूप ॥२२॥

समर्पण

मेरा मुझ में कछु नहीं, सब कछु है प्रभु तोर
तेरा ज्ञान तुद चरणी अर्पत, क्या लागत प्रभु मोर ॥१॥
तोरी कृपा दया तोरी, सब तेरा ही परताप
आप ही करता हरता दाता, तेरी सब यह दात ॥२॥
बल–बुद्धि गुन ज्ञान सब, तू ज्ञान गहे ज्ञाता
सर्व कला समरथ है, तू ध्येय ध्यान ध्याता ॥३॥
तेरी शक्त से सब कछु होय, तू करनहार करतारा
मैं अनाशक्त अनजान 'शारिका', तेरी दया कथूं ज्ञान निरधारा ४

बोध–वर्णन

गुरु-लक्ष्मण अनुग्रह ते, 'शारिका' करे बखान
नर नारी श्रवण करो, परमारथ तत ज्ञान ।



(१) चेतन स्वरूप सर्व घट वासी, तत जीवन रूप अनूप
परमारथ तत सार है, परमानन्द स्वरूप ।

चेतन-स्वरूप सर्व की जान, घट घट मांहिं करे विसराम
सोही आतम जीवन साखी, मैं मैं कर घट मांहि भाँखी।
जा से किरया कर्म सब होत, सब मांहि सो परम ज्योत
सो निराधार निरालम्ब स्वामी, परम प्रकाश अन्तर्यामी।

तिसका बोध, गवन निरोध
'शारिका' तत परमारथ सोध ।।

(२) जा बिन है ना होये कछु मीत, तिस बिन सब ही मरम पलीत
लिप्त अलिप्त तत अतीत, भिन्न अभिन्न नित अनीत।
रूप अरूप भेद अभेद, सर्व का साक्षी पुरुष निरछेद
थिर अथिर कारण अकारण, सो शिव-स्वरूप महाकारण।

रंग न रूप सर्व रंग रंगा
शारिका निराकार सो अभंगा ।।

(३) जीव निर्जीव चराचर स्वामी, गुण निर्गुण नाम अनामी
चल अचल भेख अभेखा, लख अलख अनन्त विषेखा।
एक दो नहि तीन का भेदा, ब्रह्म सत्यं शिव रूप अखेदा
अनन्त बे अन्त रूप पसारा, जा का वर्णन ना होत शुमारा।

आये न जाये सम स्वरूपा
'शारिका' बोध सो पद अनूपा ।।

(४) काल अकाल कर्ता अकर्ता, सोही सब जग धरता हरता
वस्तु अवस्तु शुन्य अशून्य, अन्तर बाहिर बसे उन्मुन !
सो केवल स्वरूप करो पहचान, सब का स्वामी रूप कल्यान
घट-घट व्यापक निज घट जान, तत परमारथ करो पहचान।

बिन तत परमार्थ, सोधे मीत
'शारिका' नहि जन्म मरण से होये अतीत ॥

(५) जाको सुमिरे गुणी ज्ञानी, जाका ध्यान लगायें ध्यानी
वेद पुराण कुरान की सार, ग्रन्थ पन्थ जा करें विचार।
योगी योग कमायें जाका, ऋषि मुनि गुन गायें वाका
सोही तत निरंजन स्वामी, अजर अमर परम आनंद निःकामी !

सो ही परमारथ तत रूप
'शारिका' सोध सोध गुणी भूप ॥

(६) निराकार साकार है सोई, सूक्ष्म अस्थूल चराचर वोही
रूप न रेखा सर्व घट वासी, इत उत निरंतर सर्व निवासी।
बावन से वह रहे नियारा, तिस दृष्टा दृश्य सकल पसारा
आये न जाये नित स्थिर, जीवन सार सदा अमर।

सब करे करायें रहे अकर्ता
'शारिका' अभय अक्षय सर्व का हर्ता ॥

(७) लोक परलोक तिस का खेला, पांच भूत त्रै रूप मेला
गुनातीत सब गुण परगासी, काल स्वरूप आप अविनाशी।
नर नारी नारायण आप, अकार उकार मकार प्रताप
नाद बिन्द कला घट धारी, प्राण अपान समान निरधारी।

ब्रह्मा विष्णु मिहेश ओंकार
'शारिका' तिन ते परे परमार्थसार ॥

(८) सो परब्रह्म परमेश्वर जान, तिस का सिमरन धरो तिस ध्यान
विवस रैने निरन्तर जाप, गुरुगम ज्ञान गुरू की बात।
स्वारथ मूल भरम दुःख नासे, परमारथ तत घट परगासे
जन्म मरन का कटे फंद, रोम रोम रसे परमानन्द।

लोक परलोक भय विनासे
'शारिका' सत-खंड मांहि निवासे ॥

शक्ति माया प्रकृति पृथिवी, ये चार अंड जग खेला
'शरिका' सृष्टि स्थिति परलय ते, शिव पारब्रह्म अलबेला।

(९) अन्तर बाहिर जो सम व्यापा, आगे पीछे तिस परतापा
ऊपर नीचे तिस पसारा, दायें बायें रूप निरंकारा।
आकाश वत् सर्व समाया, अगम अगोचर पुरुष निरमाया
सोही परम तत्त्व निर्वाण, परमारथ तत सार निधान !

सर्व का साक्षी सर्व आधार
'शारिका' कहे ज्ञान का सार ॥

(१०) शक्ति सुरति इच्छा माया, गुण प्रकृति पृथिवी पिंड गाया
चार अंड का धरता हरता, कारण महाकारण भर्ता।
शब्द स्पर्श रूप रस गंधा, या को भोग जीव कहंदा
अहं मम धार भ्रम में लागा, वासना युक्त फिरे अभागा।

जो उत्पत्ति अस्तुति प्रलयगत पाये
'शारिका' सोही भरम अस गाहे ॥

(११) सूक्ष्म अस्थल देह पिंडा, कारण महाकारण ब्रह्मन्डा
त्रैगुणी माया देह आकारा, चराचर भूत पसरा पसारा।
मन बुद्धि और अहंकार, ये त्रय अन्तःकरण विचार
चिन्तन इच्छा कर्म का फंदा, दुर्मति धार छूटे ना अन्धा।
यही अज्ञान भव-बंधन भारा
'शारिका' नहि बिन परमारथ होय छुटकारा ।।

(१२) चिन्तन से इच्छा इच्छा से कर्मा, यही दुःख सुख पाप पुण्य का धरमा
जब चिन्तन इच्छा प्रकृत आधीन, जा गुण इच्छा ताही में लीन ।
तैसा ही जीव कर्म करंता, तिस अनुकूल ही भोग भुगन्ता
दुःख सुख करम अनुकूल परापत, याही करम धर्म की आपत !
या ही कारण जीव कहलाया
'शारिका' आवागमन भरमाया ।।

(१३) यह माया का असगाह फंदा, करम फल भोग दुःख द्वन्दा
उत्तम मधम अधम योनी, बे वश होये नित फरूनी।
देह की धारना छूटे नाही, आवागमन तग टूटे नाही
करम भरम में रहे लागा, जम जाल व्याल फाया मंद भाग। ।
यही जीव भरम अंधकारा
'शारिका' बिन परमारथ नहि निस्तारा ।।

(१४) जब लग रहे अविवेक को धारे, तब लग बन्धन बांधे भारे
चिन्तन इच्छा बडे अंधकार, सूज न पाये पारावार।

देह को अपना आप ही जाने, तिस के भोग में परम सुख माने
देह नाश सुख भोग विनाशे, तब जीव को परम दुःख भासे ।।

देह के भोग सब दुःख द्वन्द
'शारिका' क्यों कर परसे परमानन्द ।।

(१५) देह आतम बुद्धि गवन भरमाये, देह भोग दुःख रूप अधिकाये
देह आतम बुद्धि पाप दु.ख मूल, चिन्तन इच्छा करम त्रिशूल।
इस अंड पिंड में नरक धाम, डूबे उबरे पिये जम जाम
जीव जले जलाये नरक की नार, छूटत नाही करे हाहाकार।

क्यों कर छूटे छुडाये कौन
'शारिका' भोगे जीव चुरासी गौन ।।

(१६) देह को जब लग सुख कर माने, तब लग क्यों कर होये अलगाने
जब लग देह आत्म बुद्धि, तब लग पाये ना सत सुद्धि।
यह वह मैं के चक्र में लागा, रंचक सार न पाये अभागा
अपने आप को बूझे नाही, तातें भरमे भरम मांही ।।

अपने आप की करो पहचान
'शारिका' यह परमारथ निधान ।।

जीवभाव संजुक्त आतमा, निज शिव स्वरूप नहि जाने
'शारिका' यही अज्ञान अंधकार, नित नित गवन भरमाने

(१७) जीवभाव रजोगुण भारा, यही भव-बंधन आधारा।
चिन्तन इच्छा में संजुगत, या कारण नहि होत मुक्त।

नाम रूप का भोगन हारा, गुण कर्म में करत अंहकारा
या वश जले जलाये नित, रंचक शान्त न होये चित्त ।

दुःख को भोगे फिर दुःख में धाये
'शारिका' यह माया का फंद अधिकाये ॥

(१८) ज्यों ज्यों भोगे देह के भोग, त्यों त्यों परसे रोग और सोग
मल विक्षेप और आवरण, ये भर छाये अन्तः करण।
काम क्रोध मद लोभ अहंकार, ये पाँच गनीम जलावनहार
ये त्रय रूपी मलिन है भारी, या से जीव न पाये निस्तारी ।

यही विक्षेप जीव को करत
'शारिका' सकल सुख ले हरत ॥

(१९) जब लग आवरण होत नहि दूर, तब लग जीव गवन मसरूर
पोथी ग्रन्थ पढे दिन-रात, तीरथ व्रत करे जप-जाप ।
दान पुण्य करे असनान, बिन आवरण मिटे न होये कल्याण
स्वारथ शुद्ध न जब लग होये, परमारथ सिद्ध होत न कोय ।

कोउ ग्रन्थ पन्थ नहि गुरु छोडाये
'शारिका' नहि जब लग सत जिज्ञास गत पाये ॥

(२०) सत करम सब मल हरे, अन्तःकरण को निर्मल करे
पाप करम जडता नासे, परोपकार में जीव निवासे ।
निर्मल भाव घट परगासे, निज आत्म स्वरूप सकल भासे
धंधा धावन मन का जाये, तब विक्षेप मिटे जिज्ञासा आये ।

चारों अंड से होये अतीत
'शारिका' सत जिज्ञासा आये तब चीत ।।

(२१) सत विवेक सत करमन का मूल, जासें मिटे आदात फज़ूल
बिन सत्संग विवेक न होये, बिन सत साधु सत्संग न कोये ।
बिन सत-सिद्धि साध न कोये, बिन सत साधन सिद्ध न होये
सब का मूल है एको एक, गुरु मुख साध चरण रख टेक ।।

सोही गुरु ज्ञानी सोही
'शारिका' तिन की संगत विवेक होई ।।

(२२) तिन गुरु संगत भेंट उपदेश, छिन में मिटें सकल कलेश
सत असत का निरणय पाये, बन्धन मुकत भेद निरनाये ।
पुण्य पाप को पहचाने, करम कुकरम को अलगाने
दुःख सुख का परसे भेद, जनम मरण का जाये खेद ।।

बन्ध मुक्त को लखे सार
'शारिका' सत विवेक चित धार ।।

(२३) सत विवेक जीव जब धारे, पाप विखाद मिटें तब सारे
सत आतम का निरणा बूझे, अगन समान जगत यह सूझे ।
राग मिटे वैराग चित आये, सत अनुराग इष्ट का पाये
भूल जाये सकल संसार, विरह अगन उमडे अपार ।।

दुर्मत विकार सकल जर जाये
'शारिका' तब सत जिज्ञास पद पाये ।।

(२४) अष्ट पहर नित दिवस रैन, पीय बिन व्याकुल रहे बेचैन
खावन पीवन सूझे ना ही, रंचक नींद न नैनन मांही।
जग के सकले रिशते नाते, कदाचित नहि मन को भाते
अपना पराया कोउ ना भाये, तब ही सत वैराग मन आये॥

उठ उठ धाये जंगल बेले
'शारिका' रहे अकेला अकेले॥

सत विवेक के बल से आये चित्त वैराग
'शारिका' गुरु लक्ष्मण कृपा करो, प्रचंड भई विरह आग॥

(२५) विरह अगन सब पाप जलाये, परमारथ चित्त लालसा आये
तब जिज्ञासु मन महरम खोजे, करम भरम तज सकले बोझे।
एक पिया सा इक चित आसा, जग से होके पूर्ण निरासा
शिव-स्वरूप आतम तत भाये, पलक-पलक तिस प्रीत कमाये।

कब दर्शन पावूँ शिव स्वरूपा
'शरिका' कब पद परसे अनूपा॥

(२६) सत जिज्ञासु मन यही चाहना, पल पल गाये निज पिय का गाना
अति अनुराग परम वैराग, रुच रुच तापे विरह की आग।
मुख पीला चित गनी उदासी, बन बन मांही फिरे उदासी
छम छम नीर बहाये नैन, मुख से बोले विरह के बैन।

दिवस रैन यही इक कार
'शारिका' बिन पिय जिया न पाये करार।

(२७) खोजन खोज करे दिन रात, कहीं मन का महरम मिले
सुखदात
जब गुरु मुख साध का दर्शन पाया, तब जिज्ञासु मन हर्षाया।
दर्शन भेंट मन भया निहाल, सब दुविधा दुर्मत मिटी कराल
श्री चरण-कमल में डंडवत करे, निज शीष तिन चरणी धरे।

अति श्रद्धा प्रेम विश्वास युक्त
'शारिका' गुरु लक्ष्मण चरनी परसे मुक्त ॥

(२८) अति श्रद्धा युक्त करे अरदास, ईश्वर-स्वरूप काटो भव फांस
यूँ कर जोड वेनती करे, सर्व समर्पण भाव चित्त धरे।
अति निर्माण परम उदासीन, तिन चरणन में होये अधीन
कृपा करो गुरु ईश्वर-स्वरूप, निज दया-दृष्टि मेटो भ्रम कूप।

नहि जब लग दया करें गुरु देवा
'शारिका' तब लग करे चरण की सेवा ॥

(२९) निज दया करे जब दयानिधान, श्रीमुख अमृत वचन फरमान
तब सत जिज्ञासु, होये सुचेत, धारे अमृत-वचन हृदय खेत।
जुगत मुकत का भेद बूझे, परम यतन से तिस में रूजे
उठत बैठत यही कार, सोवत जागत युगत व्यवहार।

चिरकाल तक करे अभ्यास
'शारिका' श्री लक्ष्मण चरणी करे निवास ॥

(३०) विध परमारथ तत बोधे, निज चित्त वृत्ति करे निरोधे
पलक पलक मन अन्तर रखे, स्वास स्वास गुरु-मन्त्र भाखे।

एक पलक भी भूले नाहीं, लौ लीन रहे सत साधन माही
रहे एकान्त साधन साधे, करम भरम तजे सब बाधे।

जीवित मरे मर के जीये
'शारिका' अमी रस तब ही पीये ॥

(३१) परमारथ तत एह बिध सोधे, अपने आप को आप में बोधे
बहिर्मुख की भरमन त्यागे, योग जुगत में रहे लागे।
वाद विवाद तजे विखाद, चित्त में कबूं ना लाये परनाद
संग कुसंग का करे विचार, कुसंग तज सत्संगत धार।

बारंबार मन अन्तर राखे
'शारिका' एहि विध अमी रस चाखें ॥

(३२) शुद्ध अहार करे नित नीत, अनयुक्त आहार तजे पलीत
मदिरा मांस कबूं ना खाये, भंग तबाकू दूर हटाये।
नियम पूर्वक मित आहार, सादा सात्विक नित विचार
समय पै अपने सेवन करे, एह बिध जीबा विकार हरे।

बारंबार कबूं ना खाये
'शारिका' तब शुद्ध विचार चित आये ॥

बिना शुद्ध आहार विचार नहि मन तन निर्मल होये
'शारिका' चाहे केते साधन साधे, व्यर्थ जीवन खोये ॥५॥

(३३) शुद्ध आहार जानो नर तब ही, नित शुद्ध व्यवहार करे जब ही
ज्यादा सूद और घूस खोरी, कम मांस तौल और चोरी।

यह दुर्व्यवहार पाप कमाई, तमोगुण बुद्धि परम दुःखदाई
पाप कमाई सेवन हारा, दुर्बुद्धि दुर्कर्म विचारा।

जांका स्वारथ होत मलीन
'शारिका' सो नर नित विषयन आधीन ॥

(३४) तांकी बुद्धि निर्मल निर्मल नाहीं, सो क्योंकर चाले सत मार्ग मांहीं
जाकी होत न शुद्ध कमाई, तां घट पाप विरत समाई।
तिस का शुद्ध आहार न होई, शुद्ध विचार न तांका कोई
सो क्यों कर शोधे तत परमारथ, जांका होवे न शुद्ध स्वारथ।

शास्त्र पढ़े ज्ञान बखाने
'शारिका' तिस मन शान्त न आने ॥

(३५) जप तप तीरथ करे अशनान, नहि बिन शुद्ध स्वारथ होये कल्याण
अनक देवी देव मनावे, हवन यज्ञ करे अधिकाये।
चाहे पग पग पै करे डंडोत, अखंड कीरतन जलाये जोत
बिन शुद्ध अहार व्यवहार विचारा, कबू न पाये परमारथ सारा।

गुरु ज्ञान ध्यान सब बेकार
'शारिका' नहिं जब लग शुद्ध विचार ॥

(३६) जैसा अहार करे दिन रात, वैसा रक्त हो उपजात
वीरज होये तैसा, वीरज अनुकूल बुद्धि हो वैसा।

बुद्धि अनुकूल उपजें विचार, विचार अनुकूल होत व्यवहार
अहार विचार करम का मूला, दुःख सुख भोग करम
त्रिशूला।

गुण अवगुण का मूल अहार
'शारिका' जा से भव-बंधन पासार॥

(३७) आहार परमान वासना मीत, शुद्ध अशुद्ध करो परतीत
वासना ही संसार का मूल, जम जाल वियाल त्रैगुणी शूल।
वासना रहित शिव अवस्था जान, वासना युक्त जीव पहचान
अशुद्ध वासना रूप शैतान, शुद्ध वासना देवत जान।

शुद्ध अशुद्ध युक्त इन्सान
'शारिका' वासना रहित शिव भगवान॥

(३८) सत संगत सत पुरुष की जान, तिस में प्रति नित प्रीति ठान
सत-संगति से पाप विनासे, शुद्ध ज्ञान विचार शुद्ध भासे।
निर्मल बुद्ध सत्मार्ग गामी, वासना शान्त मन निःकामी
बाहर की सब कल्पना जाये, निज घट मांहि रहे समाये।

सब दुविधा शान्त मंगल को पाये
'शारिका' रुच रुच प्रभु का गाना गाये॥

(३९) जब लग नहि सत्पुरुष का संगी, तब लग जानो जीव अडंगी
पाप वृत्ति युक्त सो जानो, अति उपद्रव कर्म चित ठानो।
आस वास नहिं मन से त्यागे, रहे मलीन वासना युक्त अभागे
सदा शान्त दुःखन को भोगे, आधी व्याधि ताको रोगे।

नरक अगन में नित ही लूजे
'शारिका' शान्त मार्ग कबूं न सूजे ।।

(४०) तातें दृढ मन करो विचार, सत संगत में नित पधार
सत-विचार सुन सत उपदेश, करो निदिध्यास मिटें कलेश ।
कीरत महिमा तिन की गावो, तिन चरणी सर्वस्व लुटावो
सत पुरुषन की पूजा सार, तिन का आदर्श तन मन-धार ।

तिन चरण की धूलि रमाओ
'शारिका' यूं परमारथ फल पाओ ।।

सत तत जिन अनुभव किया, तिस में भयो लवलीन
'शारिका' ईश्वर स्वरूप सत पुरुष की, चरनीं रहो आधीन ।।६।।

(४१) सत तत वादो साधू पूरा, जांके दर्शन मिटे जम जूरा
जाने मेटो सकल उपाधि, तिस सत साध का मत अगाधी ।
तिस का दर्शन दुर्लभ जान, तिस की महिमा परम महान
तिस की चरण-रज शीश रमाओ, तिस की कीरत नित नित गावो ।

लक्ष्मण साधु ईश्वर-स्वरूप
'शारिका' तिन चरणी पाया सुख अनूप ।।

(४२) नहि जब लग साध संगत में प्रीति, नहि तब लग पायें प्रभु भगत की रीति
मन का यही अवगुण भार, बिन देखे नहिं करे प्यार ।
क्योंकर चित परतीत आये, बिन परतीत नहि प्रेम रस खाये
बिना प्रेम नहि भगति होय, दुविधा मिटे न दुर्मत खोय ।

परगट ईश्वर-स्वरूप है साध
'शारिका' तिन चरणीं सुख अगाध ॥

(४३) परगट ईश्वर सत साधू जान, गुप्त रूप निराकार भगवान
सत साधू की चरणी लाग, सत आज्ञा मान बड भाग।
श्री चरण शरण में रहो लीन, अहं मम तज रहो आधीन
नित नित तिनका हुकम पहचान, आज्ञा तिनकी नित नित मान।

तिनका वचन पांचवा वेद
'शारिका' मिटे सकले खेद ॥

(४४) जो जो साध चरन लव लाया, तिन तिन परम गत सहजे पाया
जग-कीरत महिमा तिन की गावे, सदा सदा तिन नाम ध्याये।
परमारथ फल सोही पाये, जो निष्काम भाव तिन सेव कमाये
ज्ञान ध्यान पूजा सार, सत साधु के चरण चित धार।

उठत बैठत सदा गुण गावो
'शारिका' लछमन आप प्रभु राओ ॥

(४५) चार पदारथ साध के चरणी, दुविधा दुर्मत जासे हरनी
साध चरण में अठ सठ तीरथ, जासे प्रापत होये सत कीरत।
साध चरण हैं निर्मल गंगा, कलिमल हरे सकल मन अंगा
साध चरण अमीरस खान, जांको परस होये कल्याण।

साध चरन चित लावो मीत
'शारिका' ईश्वर स्वरूप के गावो गीत ॥

(४६) नहि जां घर साध सन्त महिमान, सो घर जीवत भये मसान
जां घर साध चरन निवास, तां घर श्री नारायण वास।
जां घर साध की महिमा होये, जम-जाल व्याल सकल दुःख खोये
जां घर साध की पूजा नांहि, पाप-विकार भसे तिस मांहि।

साध की पूजा सेवा सार
'शारिका' तिन चरणो सर्वस्व वार ॥

(४७) जो कोई साध की निंदा करे कराये, सो सूकर स्वान की जोनि पाये
साध का दोषी जो कोय होवे, नरक अगन में नित जलोये।
साध के संग जो राखे वैर, तां पर प्रभु का होवे कहर
जो साध के दर्शन से बेमुख, सो अपराधी रहे मन-मुख।

जो भय प्रेम नहिं साध का राखे
'शारिका' चुरासी का दुःख सो नर चाखे ॥

(४८) साध-संगत में जो ना जाये, सो बुद्धि हीन भरम भरमाये
पाप-पुण्य को नहि निर्णाये, पाप-कर्मन में रहे समाये।
सो कुकर्मी दुष्ट भारा, तिस का होवे ना कबूं उधारा
सदा सदा सो नरक का गामी, अति मलीन रहे चित कामी।

जो नहि साध-चरण की सेव कमाये
'शारिका' सो नहि कबूं मुक्त-रस-खाये ॥

साध चरण मुक्त सुख-धाम, सब गुनो मुनी चित लाये

'शारिका' ईश्वर-स्वरूप लछमन चरणों, नित अमी रस
रसना खावे ॥७॥

(४६) साध चरन में सुख घनेरा, साध चरन चूके जम फेरा
साध चरन में जाउं बलिहार, साध चरन नित चित्त आधार।
साध चरन सब कलिमल हरे, जीव की दुविधा दूर करे
साध चरन सुख निर्मल धाम, जाको परस मन होवे निष्काम।

साध चरन में जो कोई जाये
'शारिका' जनम-मरन का फंद कटाये ॥

(५०) मन का आवन जावन नासे, गुरु-गम ज्ञान मांहि निवासे
अति अत प्रेम से जुगत कमावे, घट मांहि नित रहे समाये।
बहिर्मुख का तजे बखेडा, अपना निर्मल खोजे डेरा
अष्टपहर रहे नित भीनाः गुरुगम ज्ञान में परवीना।

खोज खोज घट निर्मल धाम
'शारिका' तिस में करे विश्राम ॥

(५१) सत-साध चरन की महिमा अपार, कोउ गुरु-मुख सेवक परसे सार
जो साध चरन में होवे कुरुबान, सो गुनी परसे गुनी ज्ञान।
जो साध चरन की सेवा धारे, निज दुर्मत रोग सहज निवारे
जो सत साधू का वचन चित राखे, सो निराधार ज्ञान रस चाखे।

सत साधू का करो सत्कार
'शारिका' होवे जय जय कार ॥

(५२) जो नर नारी चाहे कल्याण, सुने वह हमरा सत व्याख्यान
उठ परभाती सवेरे सवेरे, सत साधु के जाये डेर।
तिन के दर्शन करे नित नीत, अमृत वचन सुने पुनीत
मन में राखे करे निदिध्यास, श्री चरण-कमल में करे निवास।

तिन को पूजा सेवा करे
'शारिका' तब सब मल दोख हरे॥

(५३) सब दोषों का दारू एक, राखो साध वचन मन हमेश
अनन्यभाव धारो विशेष, परम प्रीत सब हरे कलेश।
अन्तः करण होवे पुनीत, भव-बंधन से करे अतीत
बुद्धि होये अति प्रकाश, निर्मल पद में करे निवास।

परमारथ का भेद निर्णये
'शारिका' आवागमन सब जाये॥

(५४) साध चरन पर बल बल जाऊँ, साध चरण की कीरत गांऊँ
साध की कीरत महिमा भारी, तिनकी शरण में मिटे खवारी।
साध वचन अति मीठा लागे, पाप-पराध सकल उठ भागे
नित नित साध-चरण डंडोत, जो सर्व-सहायक नित-नित होत।

साध स्वरूप ईश्वर-स्वरूप
'शारिका' तिन दया-दृष्टि मिटे भ्रम-कूप॥

(५५) साध सेवा प्रभु सेवा जानो, साध-स्वरूप प्रभु पहचानो
साध की कीरत प्रभु की कीरत, साध-चरण सर्व उत्तम तीरथ।
साध का कथन वेद की वानी, जांको बूझे होवे निर्वानी
साध की महिमा अकथ अपार, वेद ग्रन्थ करे पुकार।

साध-स्वरूप ईश्वर-स्वरूप
'शारिका' तिन चरणी आनन्द कूप ॥

(५६) सब तें उत्तम यही भेद, तिन शरणागत मेटो खेद
आस वास तिन चरनी त्यागो, तिन उपदेश में नित उठ जागो।
साध के निन्दक को नहि लाखो, निज को तिन से दूर ही राखो
साध का निन्दक प्रभु निन्दक जानो, शैतान रूप तिस की पहचानो।

तांके परछांये संग न लागो
'शारिका' दूर ही दूर तां से भागो ॥

साधु शरण में जो गये, सो पहुँच गये निज धाम।
'शारिका' लक्ष्मण दया तें, नहिं बोडे गवन के गाम ॥८॥

(५७) विनती करो गुरु चरण पुनीत, सकाम भाव से हो के अतीत
दया करो हे गुरु-दातार, भव-सिन्धु से करो पार।
गहर गम्भीर है भव की धारा, को तुद बिन पार लगावन हारा

मैं शक्ति-हीन अति नेह मानी, तुव शरणागत आई नेह तानी।

कृपा करो हे लछमन दाता
'शारिका' को प्रभु कछु नहीं भाता ॥

(५८) अब की बार प्रभु मोहे राखो, रंचक दया दृष्टि लाखो
शरणागत हूं प्रभु तोरी, आप ही सोधि करिये मोरी।
जम-जाल व्याल से काडो स्वामी, मैं बुद्धि हीन हूं नेह थामी
तुव बिन मेरा कौन सहाई, किरपा करो हे प्रभु राई।

पल पल छिन छिन करूँ पुकार
'शारिका' आई तुव दरबार ॥

(५९) मेरे स्वामी करो निहाल भव-बंधन काटो दुःख-जाल
तोरे दर में हूँ भिखारी, कर किरपा मेटो खवारी।
कीरत तेरी पल-पल ध्यांऊँ, युग-युग तेरी महिमा गांऊं
कर किरपा हे बनवारी, दीजो प्रीति निज चरन मुरारी।

केवल तेरी आस भरोसा तेरा
'शारिका' का काटो भव फेरा ॥

(६०) परगट होके दरस दिखाओ, प्रेम-रस प्रभु आप पिलाओ
अपना सुन्दर रूप लखाओ, निज चरणन में आप मिलाओ।
तेरी दात मन करे निहाल, करें कृपा जब कृपाल
अपने नाम की प्रीति दीजो, प्रभु जी अपनी कृपा कीजो।

औैर न चाहूं बिन प्रभु तोहे
तेरी निर्मल वाट शारिका जोहे ।।

(६१) मैं हां पापी अवगुण हारी, अति नीच कर्मन को धारी
सकले पाप करे जग वाले, अज्ञान अवस्था मां हीं गाले।
एको पुन कर्म ना कीना, दुष्टपने में जन्म व्यतीना
चित्त सोच विचार ज़रा ना आया, मन मुखता में जीवन गंवाया।

क्या करो अब केशवराय
'शारिका' पल पल तोहे गोहराये ।।

(६२) पांच रिपु मोहे लूटन हारे, काम क्रोध लोभ मद हंकारे
दिवस रैन नित करें खुवार, नरक अगन में देत हैं जार।
एक पलक भी शांत न पायें, नोच नोच मोरा जीया खायें
हाहाकार मचा घर मेरे, अब कौन बचाये बिन प्रभु तेरे।

आओ आओ प्रभु दीनदयाल।
'शारिका' होई बहु बिहाल। ।।

(६३) अब की बेर मोहि राखो स्वामी, कर किरपा हे अन्तर्यामी
बार बार पुकारूं तोहे, इक तेरी आस भरोसा मोहे।
और नही कोई जग में मेरा, जो इस दुःख से करे निबेडा
तूं सब जग का भर्तार, प्रभु मोहे राखो चरण आधार।

कर किरपा हे दीन दयाला
'शारिका' के हो आप रखवाला ।।

(६४) पतित-पावन तू नाम धराया, करो पावन मोहे हे रघुराया
सब पर दया करत हो दयालू, मुझ पर किरपा करो कृपालू।
तुम बिन और न कोई ठिकाना, जो ये जीव जाये समाना
सब का प्रभु जी करें उद्धार, क्यों देरी करत हो मेरी बार।

मैं जनम जनम की अवगुण हारी
'शारिका' पर दया करो मुरारी ॥

दया करो गुरुदेवन देव, हे लक्ष्मण ईश्वर-स्वरूप
'शारिका' तुद शरणागती, प्रभु मेटो भरम चित्त कूप ॥९॥

(६५) इस भरम-कूप से काडों सांई, राख लीजो निज चरणन मांहीं
अमीरस पान कराओ दाता, स्वरूप अनूप दिखाओ मन भाता।
दरस परस मन लीन समाये, ना आये ना फिर जाये
अष्ट पहर रहे लवलीना, हे प्रभु तेरे चरन आधीना।

अब दया-दृष्टि करो प्रभु राय
'शारिका' युग युग तेरा गाना गाये ॥

(६६) जब लग तूं नहिं होये दयाल, तब तक जीव का मंदा हाल
तुम बिन कौन सहायक दाता, तुम बिन मोहे कोऊ न भाता
तूं सर्वग सर्व का स्वामी, तुम बिन जीव नित नेह थामी
कर किरपा रख चरणों मांहीं, अब की बखश लियो मुझ तांई।

मैं अंध-बुद्धि अवगुण हारी
''शारिका' की प्रभु मेटो खारी ॥

(६७) अपने चरण की प्रीति दीजो, अपनी शरण में मोहे लीजो
हे दाता प्रभु परम दयालु, करु कृपा काटो भव-जंजालु।
तुम किरपा पूरण हों काज, होये दयाल मिटें भ्रम-पाज
सर्व कला तूं ही समरथ, जो चाहें सो तेरे हथ।

सुनो सुनो हे प्रभु अन्तर्यामी
'शारिका' तुम बिना सदा नेह थामी ॥

(६८) अपार तूं तेरो महिमा अपार, सर्वज्ञस्वरूप तूं करतार
तेरी रचना सब तेरा खेला, पांच तत्त्व और तीन का मेला।
पच्चीस की यह सकल समाज, मनोमयी यह सकला राज
आवत जावत भरम संसारा, तुम बिन ठौर नहीं करतारा।

मर अमर सब तेरा रूप
'शारिका' के तुम ईश्वर-स्वरूप ॥

(६९) बिन तेरे सब जग दुःख रूपा, भरम अगन नरक का कूपा
बिन प्रभु तेरे सकल असार, लोकांलोक जो पसरा पासार।
बिन तेरे सब काल स्वरूप, तू अकाल स्वरूप ज्योति अनूप
बिन तेरे सब अंधकारा, घट पट सकल प्रकाशनहारा।

जों चाहें तूं करें स्वामी
'शारिका' रहे तुद शरण बिसरानी ॥

(७०) अनन्त अपराधी तूं जग तारे, वाल्मीक जैसे निस्तारे
औगुणहारी गणिका तारी, देर करें क्यों मेरी बारी।
भिल्लनी का प्रभु किया उद्धार, क्यों देर करें प्रभ मेरी बार

नाई मोची और कसाई, तूं सब पै कृपा करी रघुराई।

मेरी बार क्यों देर करें दाता
'शारिका' की सुन लक्ष्मण विदाता॥

(७१) गुरु प्रह्लाद बालक तारे, नाम देव और गोमा उद्धारे
मीरा के प्रभु भये सहाई, तुद कृपा लल्लेश्वरी परम गत पाई।
अहल्या का प्रभु किया उद्धार, देके अपना चरण आधार
सहजू और भगत दया बाई, तुम दया-दृष्टि ज्ञान गत पाई।

तूं राखनहार अपार गोसांई
'शारिका' तुद शरणागत मांई॥

(७२) हे प्रभुदाते किरपा कीजो, अपनी चरण शरण में लीजो
करो दया हे दया के सागर, दया-दृष्टि करो भाग उजागर
तेरा नाम जपूं मैं दाता, तेरे प्रेम में रहूं राता
इक पल विसरूं ना प्रभ तोहे, परम प्रीति दीजो मोहे।

'शारिका' इक चित हो तेरा गुण गाये
करो किरपा हे प्रभु लछमन राये॥

'शारिका' जब लग गुरु भक्ति नहीं, प्रभु भगती ना तब लग पाहीं
गुरु लक्ष्मन को भगती ते, परमधाम में जायें॥१०॥

(७३) गुरु भगती प्रभु भगती का भेद, धारण करो मिटे सब खेद
गुरु भगती सब दोष मिटाये, हम मम रोग शान्त हो जाये।

गुरु भगती सत भगती निधान, जांको धार मिले भगवान
गुरु भगती बिन सार न पाये, नहि प्रभु भगती का भेद अर्थाये ।

गुरु भगती सत अनुराग का मूला
'शारिका' गुरु लछमन भगती मेटे जमशूला ॥

(७४) गुरु भगती कोऊ गुरुमुख पाये, जो अहम मम तज गुरु चरणो आये
जो आसा मनसा मन की मारे, निष्काम भाव गुरु चरणो पधारे ।
तन मन धन गुरु चरणो त्यागे, श्री चरणन की सेवा लागे
सो गुरु-मुख गुरु-भगत कहलाये, जो चरण शरण सदा लव लाये ।

कोउ विरला जग में गुरु भगत जान
'शारिका' जो निज मन की करे नित हान ॥

(७५) जो मन कहे सो करे नाहीं, जो गुरु कहे चले तिस मांही
चित्त निर्माण रहे उदासीन, श्री चरणन में रहे आधीन ।
गुरु का आदर्श तन-मन धारे, गुरु का हुकुम नित नित विचारे
आज्ञा मांही रहे परवीन, सो गुरु-भगत जग में चीन ।

गुरु का मन वीस बिसवा जाने
'शारिका' सोही गुरु-भगत निराने ॥

(७६) गुरु की भगती ए विध धारे, अपना सर्वस्व गुरु-चरणी वारे
तन मन राखे आज्ञा मांहीं, अपनी हिकमत राखे नाहीं।
हाज़िर रहे नित विच हज़ूरी, निष्काम मन करे मज़दूरी
चित्त में राखे सबर सबूरी, तब शिष्य चढे प्रेम खजूरी।

'शारिका' प्रभु भगती को तब ही पाये
जब गुरु लछमन चरणी रहे समाये ॥

(७७) गुरु का हुकुम ना उल्थाये, मीन मेख निकाले नाये
असोच हो चले तिस मांहीं, मन रंचक शंका लाये नांहीं।
जब गुरु साहब आज्ञा करें, सत वचन कह हृदय धरें
रंचक दम ना मारे सन्मुख, तब शिष्य होवे सच्चा गुरु-मुख।

'शारिका' सन्मुख होके कबूं ना चाले
गुरु के छाये पै पग न डाले ॥

(७८) अति श्रद्धा प्रेम गुरु में राखे, धन सत्गुरु धन सत्गुरु भाखे
सेवा से मुख मोडे नांहीं, सेवक लाग रहे सेवा मांहीं।
गर्मी सर्दी नहि मन लाये, दुःख सुख में चित ना डुलाये
गरु-तुल और ना काहू को माने, ईश्वर-स्वरूप गुरु को जाने।

'शारिका' डंडौत करे नित सेव कमाये
तब सिख गुरु-मुख पद पाये ॥

(७९) दुःख-भंजन गुरु मूर्त पेख, निज गुरु को घट घट में देख
अंग संग गुरु को जानो नीत, हृदय मांहीं पहचानो मीत।
गुरु सहायक नित नित होये, जो सिख चरणा रहे समोये
गुरु का कथन सच कर माने, गुरु को ईश्वर-स्वरूप जाने।

तब सिख गुरु का भगत कहलाये
'शारिका' गुरु-कृपा परम पद पाये ॥

(८०) जो कोई चाहे निज कल्याण, निज आतम का चाहे ज्ञान
प्रथम गुरु की भगती धारे, अपनी हिकमत सकल विसारे।
गुरु की सेवा गुरु की पूजा, इस से उत्तम धर्म न दूजा
गुरु की कहनी रहनी गुरु की, धारे चित्त में सहनी गुरु की।

गुरु चरणों में जीवन त्यागे
'शारिका' मुक्त पदारथ पाये बड भागे ॥

गुरु आज्ञा में मर मिटे, गुरु का भगत सुजान
'शारिका' लछमन गुरु अनुग्रह ते, जीव पाये कल्याण ॥११॥

(८१) गुरु कृपा से जम-कंकर टरे, द्विविधा दुर्मत सकली हरे
गुरु-कृपा मन धीरज आये, निश्चल पद में जीव समाये।
गुरु-कृपा जब हो जाये, जीव सत-मार्ग की सोजी पाये
गुरु-कृपा सब कारज पूरें, काल-करम सब मिटें वसूरे।

बिन गुरु-कृपा सूझ ना होये
'शारिका' जीव विचारा भ्रम में खोये ॥

(८२) गुरु-कृपा का पात्र बन, घर में परसें अमोलक धन
विवेक वैराग धरो मन मांहि, दूर करों सब विषयन ताईं।
गुरु-आज्ञा में नित ही चालो, गुरु-सेवा में तन मन गालो
हर दम गुरु का ध्यान धरो, जो गुरु कहे सोही तुम करो।

गुरु-किरपा तब ही नर होये
'शारिका' नित लछमन चरणी जब बसोये ॥

(८३) बिन गुरु-किरपा नहि मार्ग पाये, आवागमन में नित भरमाये
बिन गुरु-किरपा जीव रहे अन्धा, नित नित परसे दुःख द्वन्दा
बिन गुरु-किरपा सदा अशान्त, मिटे न कबहुं बुद्धि भ्रान्त
बिन गुरु-किरपा मनवां डोले, अनर्थ व्यर्थ वाणी घट बोले।

रंचक शान्त न परसे जीया
'शारिका' बिन गुरु किरपा मिले न पीया ॥

(८४) गुरु-मुख गुरु जब किरपा करें, मन की सकली भरमन हरें
देके अपना चरण अधार, सत-मारग में देत हैं डार।
निज किरपा कर नाम जपायें, घट में ज्योत से ज्योत जलायें
मिटे अन्धकार होये परकाश, शिव-स्वरूप दरसे अविनाश।

गमन मिटे सुख-सार को परसे
'शारिका' लछमन किरपा जिया नित हरषे ॥

(८५) जो परसन्नता मन में आये, वँ तो कथनी कथी ना जाये
सैन बैन से परे की बतिया, गुरु-मुख होये जाने यह गतिया।
जैसे गूंगा धुड़ को खाये, कौन मुख स्वाद बताये
आप ही खाये आप तृप्ताये, गुरु-किरपा का फल अर्थाये।

निज अनुभव से होये परतीत
'शारिका'गुरु -किरपा का फल पुनीत ॥

(८६) उठो करो नित गुरु की सेवा, सत-मार्ग का यह है भेवा
छोडो दुर्मत तजो अभिमान, अपने आप हित कल्याण।
जीवन में सत-जीवन पावो, ये ही दुर्लभ कार कमाओ
बारम्बार हम किया विचार, उठ सजनी यह कर सत्कार।

बारंबार नहि मानुष चोला
'शारिका' यह तो अतिअत अनमोला ॥

(८७) नित नित या का करो उद्धार, परसो परसो या की सार
करो करो या में कल्याण, यतन यतन से बुद्धीमान।
तजो तजो सब कूडे धन्धे, करम धरम फल गन्दे गन्दे
बारंबार करो विचार, ये क्या कारण जीवन संसार।

सोचो सोचो अपना आप
'शारिका' क्यों कर जाये जीवन-संताप ॥

(८८) जो ना करे होश रे जीया, दुःखी रहेगा नित नित हीया
कलप कलप के जीवन विहायें, जम-जाल-व्याल में नित ही फांयें।
अन्तक रोये मल मल हाथ, क्या ले जायें अपने साथ
पहले सोच ना कीनी भाई, अब अन्त-काल क्या बन आई।

'शारिका' काल-कराल पकड़ ले जाये
अब कौन तेरा जो तोहे छुडाये॥

देह बुद्धि को धार के, बहुविध पाप कमाये
'शारिका' अन्तकाल जब जमने घेरा, जीव कौन गती गत पावे ॥१२॥

(८९) उठ सजनी जरा कर विचार, क्या तेरा इस संसार
माता-पिता अरु भ्राता बहन, साक संबन्धी नाती सैन।
मित्र बन्धु संगी साथी, धन-धाम सुख मन भाती
इन सब का मोह दुःखदाई, कौन आया संग कौन जाई।

यमराज जब शासना देवे
'शारिका' कौन तेरा जो छुडावे॥

(९०) कौउ नहि जो संग उठ चाले, दृष्ट निहार जरा तूं बाले
सकल पदारथ काल के साथ, अन्त को बने सब काल का भात
सब की बन्त काल-स्वरूपा, मोह वश जीव जाये नरक-कूपा
ये ही भरम जीव को भारी, मिथ्या का मोह करे खँवारी।

मिथ्या को ही सत कर माने
'शारिका' यही भरम गवन कराने॥

(९१) जो सृष्टि स्थिति परलै रूप, सो ही मिथ्या जानों भूप
जो आज है कल ना होये, मिथ्या रूप जानो सोये।
जो वस्तु नित पर आधारी, इक छिन रहत नहीं निरधारी
सजनो सो तूं मिथ्या कर परतीत, ये ही भरम है भरम पलीत

मिथ्या का मोह नित दुःखदाई
'शारिका' मिथ्या भोग परम दुःखदाई॥

(९२) कर विचार तेरा कोई नाही, इस मिथ्या संसार के माही
संजोग वियोग का यह सब मेला, काल बली का यह सब खेला।

आवे जाये काल के मांहीं, यहां थिरता काहू को नाहीं
पलक पलक जो रूप बदलाये, तांका मोह परम दु:खदाये।

जिस वस्तु की नहि कोई सार
'शारिका' तिस का तजो मोह पियार ॥

(६३) तृण से लेकर ब्रह्मा तांई, जो सकल पदारथ हैं जग मांही
सब हो आवागमन के मांही, तिन को स्थिरता रंचक नांही।
तीन काल यह भरम का रूपा, तीन काल यह सब दु:ख कूपा
रंचक सुख नहीं तिन मांही, अन्धमत जीव को सूझत नांही।

रुच-रुच मिथ्या में मोह करे
'शारिका' आये जाये योनी बुहुधरे ॥

(६४) कभी ऊँच कभी नीच में धाये, नित चुरासी में भरमाये
कई जनम हून्य जीवन पाया, कई जनम सूकर बन आया।
कई जनम बना कीट-पतंगा, कई जनम पशु पक्षी बहु-रंगा
कई जनम बना विष्टे का कीडा, जनम-मरण पाई दु:ख पीडा।

बहु-रंग जूनी बहु-रंग भोग
'शारिका' अनन्त जन्म कोना संजोग ॥

(६५) रंचक मात्र नहि मन तृप्ताया, भोग भोग बहु दु:ख पाया
चौरासी मांही नित परवोन, रहा मिथ्या वासना के आधीन।
एक पलक भी छूटत नांहीं, रुच रुच तिस में लीन समाई
करम गति गत परम असगाह, भोग भोग चौरासी फाह।

क्यों कर छूटे जीव विचारा
'शारिका' नित चित कर विचारा ॥

(९६) तन मिथ्या मन मिथ्या भाई, मिथ्या सकल संसार दुःखदाई
कोई नही जो शान्त देव, मूरख जीव रुच रुच सेव।
यही जीव भरम असगाह, अनवर चित्त माया फाह
दाने बोने सभी भरमाये, या वश ही देह धर जग आये।

करम भरम में रहे सब लाग
'शारिका' क्यों कर छूटे जीव मंद-भाग ॥

करम भरम भव-बंधन भारा, कोउ जीव ना छूटन पाये
'शारिका' शुद्ध अशुद्ध वासना, आवागमन भरमाये ॥१३॥

(९७) अशुद्ध वासना प्रथम त्याग, सत करमों में नित उठ लाग
सादा जीवन मन-तन धार, शुद्ध अहार करो शुद्ध विचार।
शुद्ध व्यवहार करो दिन-रात, लेन देन शुद्ध सुख-दात
सतसंग में नित प्रति जागो, सत-असत का निर्णय पाओ!

असत तजो सत करो खोज
'शारिका' परसो सत जीवन मोज ॥

(९८) नियम-पूर्वक जीवन धार, स्वारथ परमारथ के सब कार
दम दम सिमर गुरु नाव सुख-दाई, गुरुगम ज्ञान में अधिक लव लाई।
उठत बैठत सिमर नित नीत, सोवत जागत नाम प्रीत
नित आठों याम सिमर निरधार, प्रान अपान में फांसा मार।

ए विध सिमरन में मन राख
'शारिका' सुन संतन का भाख ।।

(६६) सिमरन से मन भरमन त्यागे, निज आतम अनुराग घट जागे
सिमरन से सब दुविधा जाये, नित अन्तर माही रहे समाये।
सिमरन से सब पाप विनासे, पुन्न करम वृत्त परगासे
सिमरन सकल तिमिर बुध नासे, परम प्रकास घट में बासे।

सिमरन की गत कही ना जाये
'शारिका' सिमर सिमर सत गत पाये ।।

(१००) सिमरन ही सत योग निधान, सिमरन से ही होवे कल्याण
सिमरन साधन सार है मीत, सिमरन से मन होवे पुनीत।
जग सिमरन भव-बंधन मूल, प्रभु सिमरन मिटे जम-शूल
सिमिरन से निश्चल पद पाये, सिमिरन से भव-बंधन जाये।

सिमिरन सार है जग में साजन
'शारिका' सिमिरन से होये काल-विभाजन ।।

(१०१) सिमरन मन का रूप है भाई, प्रभु सिमर सिमर परम गत पाई
देह सिमर जीव भया संसारी, आतम सिमर भयो करतारी।
जाको सिमरे मन तदरूप समाये, सिमरन का यही भेद गुणी
राये
सर्व रोग संताप हरे, जब दृढ निश्चय प्रभु सिमिरन करे।

सिमरन साधन परम पुनीत
'शारिका' भव-बंधन से करे अतीत ।।

(१०२) ज्ञानं बन्धः यही भेद, जग का सिमिरन जीव को खेद
त्रैमल दोष सर्व का मूल, अज्ञानं बन्धः नित जम शूल ।
ज्ञानं बन्धः अज्ञानं बन्धः, जग सिमरन से यह दुःख द्वन्दा
द्वन्द-बंधन सत सिमिरन काटे, जो परम प्रीत गुरु-गम राटे ।

मन निश्चल घट आवरण काफूर
'शारिका' प्रभु सिमरन से भव-बधम चूर ॥

(१०३) प्रभु सिमरन परम सुख खान, सिमर सिमर पावो पद कल्याण
प्रभु सिमिरन सब भूख मिटाये, निज रूप में जीव समाये ।
प्रभु सिमरन त्रै ताप विनासे, परम आनन्द रूप परगासे
प्रभु सिमरन की कथा अपार, गायें गुनी जन वेद अवतार ।

करो प्रभु सिमरन सहत परीत
'शारिका' गुरु लछमन चरनी रख परतीत ॥

(१०४) बिन प्रभ सिमरन जिया भरमाये, फिर फिर गवन चुरासी आये
बिन प्रभ सिमरन का ये जम-जाल, छूट न पाये होये बेहाल
बिन प्रभ सिमरन नित दुःख मांहीं, कोऊ जतन से छूटे नांही
बिन प्रभ सिमरन द्दग संसारो, चारों युग पाये खवारी ।

प्रभ सिमरन सब दोष निवारे
'शारिका' सत-खंड़ जीव पधारे ॥

प्रभ सिमरन चित्त धारिके, जीव परम पद पाये ।
'शारिका' स्वपद निर्वाच अनाम है, जहां जाये बहुड न आये ॥१४॥

(१०५) प्रभ सिमरन सत धाम की कुंजी, गुरु-कृपा परसो यह पूंजी
परम जतन खोलो मन ताला, घट में होये परम उजाला।
घर में घर की सोजी आये, नवदर बंध दसम दर पाये
तिस मांहो जा करे परवेश, जां में बसे पुरुष-नरेश।

दरशन भेंट तिस संग समाये
'शारिका' नाद नगाडा बजाये ॥

(१०६) अनहद बाजे बहुविध तान, गोपियां नाचें देखें कान
कूंज गली में लीला होये, निज नैनन लखे गुरुमुख कोय।
जो देखे ये लीला अपार, गुंग होये रहे चुप मार
नैन बैन न सैन बुझाये, निज अनुभव से तृप्ताये।

अकथ कथा होये घट मांहीं
'शारिका' बिन गुरु सुने कोऊ नाहीं ॥

(१०७) जो गुरु-चरणन का होये दास, प्राण-अपान में मारे फांस
पल पल छिन छिन नाम ध्याये, शिवोऽहं शिवोऽहं अन्तर गाये।
आवत प्राण में दृष्टि राखे, जावत लखे गुरु-गम भाखे
अन्तर आवे बाहर जाये,, गुरु-गम ज्ञान में प्रीत अधकाये।

परम-प्रीत गुरु जुक्त ध्याये
'शारिका' परम प्रकाश समाये ॥

(१०८) परम प्रकाश जब घट में होये, दुविधा दुर्मत सकली खोये

अपने आप में रहे बीना, सत-स्वरूप मांही लव-लीना।
घट-पट का सब मिटा अन्धेरा, परसे परम आनन्द घनेरा
भूख प्यास माया मन नासा, परम-तृप्त निरमाया घर बासा।

परम स्वतन्त्र पद निर्मल धाम
'शारिका' गुरु की मेहर करे विश्राम ॥

(१०९) करम-क्रीडा मन की नासी, आवागमन की कट गई फांसी
निरालम्ब निर्वाण-पद पाया, शुनिनिराकार में जा समाया।
अकथ कहानो अनुभव भेद, घट निर्णाया मिटा सब खेद।
सलिले सलिल मिल भया यक रूप, त्यूं जीव ब्रह्म मिल भया तद्रूप।

कहन कथन में आवत नांहीं
'शारिका' जो जाने समाये तिस मांहीं ॥

(११०) अगम अगोचर अकथ स्वरूप, रंग न रूप अलख अनूप
चिह्न अकार न ताका कोई, रेख ना भेख निराकार बसोई।
आये ना जाये नित सम स्वरूप, घटे बडे ना रूप अरूप
जैसा था वैसा ही जाना, ईश्वर-स्वरूप अपार भगवाना।

जानन योग को घर में जाना
'शारिका, लछमन दया अब मम माना ॥

(१११) अकथ अपार अलोक अनूपा, जाकों खोजें गुनि मुनि भूपा
कठिन तपस्या तपसी धारे, पंच धुनी तप देह जारे।

हठ योग धार मुंद्रा करे, उलट कपाली आसन धरे
नाना भांत प्राणायाम कमाये, तो भी योग की सार न पाये।

बिना यथारथ गुरु-गम ज्ञान
'शारिका' कोउ ना परसे पद-निर्वाण ॥

(११२) बीज-मन्त्र गुरु-गम ज्ञान, ज्ञान-योग का पूरन निधान
समरथ गुरु के चरणा जाओ, तिन शरणागत भेद यह पाओ।
प्रथम सेवा-टहल करो निष्काम, पूरण आधीन होके गुलाम
जब किरपा करे गुरु देवा, अपना देवें गुरु-गम भेवा।

सच्चा चाहक सिख श्रद्धावान
'शारिका' निदिध्यास करे पद पाये निर्वाण ।।

अकथ कथा निर्वाण पद, कोउ गुरु-मुख सिख निर्णाये।
'शारिका' ईश्वर-स्वरूप लछमन चरनी, जो आपा मन का गंवायें ॥१५॥

(११३) जो तन मन अपना होम करे, शरीरं हविः भेद चित्त धरे
तब घट मोहीं ब्रह्म परगासे, जीव भाव तुरंत बिनासे।
इन्द्रिय संयम मन निर्माण, अहं मम वृत्ति तज बुद्धिमान्
ज्ञानेन्द्रिय घट उलटाओ, सूरत शब्द पुरान लिख लाओ।

अकस्मात् खुले अगम कवाडी
'शारिका' सप्तम आकाश लगाये उडारी ॥

(११४) उत्तर से पश्चिम को ध्याये, पूरब देश की सोजी पाये।
प्रयागराज तरवेणी घाट, हंसा परसे निर्मल बाट।

गंग-जमन सरस्वती का मेला, बाजे अनहद ध्वनि अलबेला
भंवर गुफा की खुली ताकी, प्राण पुरुष की देखी झांकी।

घट में होये छतीसों राग
'शारिका' अखंड ज्योत जले बड़भाग ॥

(११५) अखंड ज्योत का दर्शन पाया, ज्ञानं अन्नं भेद निर्णाया
भूख प्यास भई नींद काफूर, निज आतम-ज्ञान भोग मसरूर।
निज-धाम में वासा कीना, निज-स्वरूप में भयो लवलीना
ना आये ना अब जाये, उन्मनी घाट रही समाय ;

एक दो का भरम-विनासा
'शारिका' केवल स्वरूप में कीना वासा ॥

(११६) ना कछु कीया ना करने योग, मैं बुद्धिहीन सर्व अयोग
गुरु ईश्वर-स्वरूप किरपा कीनी, श्री चरण-शरन में वासा दीनी।
मुझ में कछु नहीं गुन ज्ञान, मैं अन्ध मत औगुण हारी नादान
ना कोई जप-तप तीरथ कीना, मैं अनजान नहीं कछु कीना।

अपनी दात दीनी गुरु दाता
'शारिका' तिन के भई रंग-राता ॥

(११७) दात करी गुरु दातार, बांह पकड भव कीना पार
थी मैं जन्म-जन्म की गोता खाती, जम-जाल-व्याल में दु:ख पाती।
आर-पार मोहे सूझा नाहीं, डूब रही थी वैतरणी मांहीं
दयालु गुरु अनुग्रह कीना, भव सागर से काढ लीना।

निज चरणन के मांही राखा,
'शारिका' धन सत्गुरु सत्गुरु धन भाखा ॥

(११८) गुह्य भेद गुरु-गम दरसाया, परम-प्रीत निज नाम जपाया
रुच-रुच नाम रस दीना, अन्तर घाट कियो लवलीना ;
आप ही दाता पाट खोला, ले गया निज धाम अडोला
नाद बजाया ज्योति जलाई, अपनी छवि आप दिखलाई ।

अकथ कहानी आप सुनाई
'शारिका' नैन वैन बिन सैन समझाई ॥

(११६) भरम मिटा सुख-सार को पाया, विजय-मंगल अब हमने गाया
अब करने योग रहा कछु नांहीं, लीन भई निश्चल पद मांही ।
करम धरम सब पूरन होया, निजभव-बंधन सकला खोया
निज धाम में करूं वास, पूरन भई सकल मन आस ।

परम तृप्त पद मांही समाई
'शारिका' ना आये ना अब जाई ॥

(१२०) अगम भेद घट निर्णाया, परमारथ फल घर में पाया
ज्योति स्वरूप छवी अनूप, सप्तम आकाश भरा अमृत कूप ।
बूंद बूंद अमी रस चोये, बिन मुख जीवा चाखे जन कोय
बिन कर्तार तंबूरा बाजे, बिन श्रवण सुने राम राजे ।

त्रैलोकी का राज पाया
'शारिका' मंगलाचरण गाया ॥

निर्वाण गति गत अनूप है, चतुरथ धाम के पार
'शारिका' ईश्वर-स्वरूप लछमन अनुग्रह, कोउ निरणाये सार ॥१६॥

(१२१) निर्वाण गत सो नर पाये, जा मन अधिक अनुराग आये
जो परम वैरागी भोग त्यागी, सो निर्वाण-मार्ग में लागी।
छिन-छिन मन का मान निचोडे, पाप अपराध सकल चित्त छोडे
नित ही मन पर रहे असवार, अन्तर बाहिर नित निरधार।

गुरु शरणागत होके मीत
'शारिका' गावे गुरु का गीत ॥

(१२२) गुरु बिन और न काहू को माने, अपना सर्वस्व गुरु को जाने
गुरु आज्ञा में तत्पर रहे, सो ही करे जो गुरु कहे।
मन-मानी सब मन की त्यागे, गुरु चरणों को सेवा लागे
गुरु का नाम ध्याये नित, परम-प्रीत निर्मल चित्त।

इक चित्त ध्यान धरे सतनामा
'शारिका' तब ही परसे पद निर्वाणा ॥

(१२३) अगम अगोचर निर्मल धाम, तोन लोक के पार मुकाम
चौथा लोक परम पुनीत, जा में बसे पुरुष अतीत।
झल मिल झल मिल ज्योत चमकार, होवे उन्मन घाटी नाद किलकार
नाद निरत सुरत होये एका, ज्ञानं जाग्रत यह ज्ञान विशेखा।

एक में अनेक, अनेक में एका
'शारिका' अनुभव हुआ मिटा भुलेखा ॥

(१२४) अपने आप को आप में जाना, सब भरम मिटा अब मन माना
ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय घर जाता, अपने आप में भई रंगराता।
सकल रंग भये काफूर, जब परगासा घट निज नूर
नूर सरूर में भई लवलीन, परम अनन्द परसा असीम।

अब कोउ क्रिया करम कर्त्ता नांही।
'शारिका' अकर्त्ता भई निज मांही॥

(१२५) रोम रोम में रा रगकारा, लीन भया अब सकल संसारा
शून्यनिङ्कार पद निर्वाण, जीवन्मुक्त पद कल्याण।
निर्विकार स्वरूप तत निरञ्जन, ओंकार सकल दुःख भंजन
सोऽहं शिवोऽहं निज भ्रम जाता, अद्वैत-स्वरूप भया मनमाता।

चैतन्यं स्वरूप पारब्रह्म परकासी
'शारिका' लछमन अनुग्रह भई अविनासी॥

(१२६) कहन कथन की गत नहि सजनो, मैं तो भई गुरु-चरण-रज
रजनी
निज अनुभव से आई परतीत, गुरु लछमन का गाऊं गीत।
तिन की दया दृष्टि परताप, सोऽहं सोऽहं करे मन जाप
शिवोऽहं शिवोऽहं पद निरणाया, सार भेद परमारथ पाया।

तृप्त भई सब तृष्णा निवासी
श्री पद-पंकज में 'शारिका' निवासी॥

(१२७) अकथ कथा अगोचर वाणी, अलख-स्वरूप पद निर्वाणी
अनुभव करे परम गत पाये, केवल स्वरूप को निरणाये।

सार-भेद परमारथ ज्ञान, परम सुख सार निधान
साधन करे सिद्धगत पाये, करने योग रहे ना काये।

साधन सर्व सिद्धि दातार
'शारिका' परम प्रीत से लेयो धार ॥

(१२८) जो कोई चाहे निज कल्याण, परमारथ तत करे पहचान
प्रथम गुरु शरणागत होये, हं मम तज श्री चरण बसोये।
आज्ञाकारी-पद को पाये, फिर ले उपदेश साधन कमाये
जतन जतन कर साधन साधे, नित नित परम प्रीत से राधे।

रंग लागत लागत लागे मीत
'शारिका' गुरु-कृपा पद पाये पुनीत ॥

गुरु-कृपा गुरुदात से, गुरु-मुख साधन सार निरणाये
'शारिका' जनम जनम द्विविधा नासे, श्री लछमन गुरु सरनाये ॥१७॥

(१२९) प्रभु का नाम जपो सुख-सार, नित निरंतर प्राण की धार
प्रान अपान की संधि करो, जप जप नाम दुविधा हरो।
आवत प्राण संग नाम उच्चारो, जावत प्राण जपो निरधारो
आवत जावत दृष्टि राखो, गुरु-गम ज्ञान अन्तर घट भाखो।

नित नित श्वास उश्वास उच्चारो
'शारिका' यही साधन सार को धारो ॥

(१३०) अति श्रद्धा चित्त अति विश्वासा, स्वास उश्वास सुरत की फांसा
सुरत शब्द का करो मेला, नित निरन्तर खेलो खेला।

(१२४) अपने आप को आप में जाना, सब भरम मिटा अब मन माना
ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय घर जाता, अपने आप में भई रंगराता।
सकल रंग भये काफूर, जब परगासा घट निज नूर
नूर सरूर में भई लवलीन, परम अनन्द परसा असीम।

अब कोउ क्रिया करम कर्त्ता नांही।
'शारिका' अकर्त्ता भई निज मांही ॥

(१२५) रोम रोम में रा रगकारा, लीन भया अब सकल संसारा
शून्यांनिङ्कार पद निर्वाण, जीवन्मुक्त पद कल्याण।
निर्विकार स्वरूप तत निरञ्जन, ओंकार सकल दुःख भंजन
सोऽहं शिवोऽहं निज भ्रम जाता, अद्वैत-स्वरूप भया मनमाता।

चैतन्यं स्वरूप पारब्रह्म परकासी
'शारिका' लछमन अनुग्रह भई अविनासी ॥

(१२६) कहन कथन की गत नहि सजनो, मैं तो भई गुरु-चरण-रज
रजनी
निज अनुभव से आई परतीत, गुरु लछमन का गाऊं गीत।
तिन की दया दृष्टि परताप, सोऽहं सोऽहं करे मन जाप
शिवोऽहं शिवोऽहं पद निरणाया, सार भेद परमारथ पाया।

तृप्त भई सब तृष्णा निवासी
श्री पद-पंकज में 'शारिका' निवासी ॥

(१२७) अकथ कथा अगोचर वाणी, अलख-स्वरूप पद निर्वाणी
अनुभव करे परम गत पाये, केवल स्वरूप को निरणाये।

सार-भेद परमारथ जान, परम सुख सार निधान
साधन करे सिद्धगत पाये, करने योग रहे ना काये।

साधन सर्व सिद्धि दातार
'शारिका' परम प्रीत से लेयो धार ॥

(१२८) जो कोई चाहे निज कल्याण, परमारथ तत करे पहचान
प्रथम गुरु शरणागत होये, हं मम तज श्री चरण बसोये।
आज्ञाकारी-पद को पाये, फिर ले उपदेश साधन कमाये
जतन जतन कर साधन साधे, नित नित परम प्रीत से राधे।

रंग लागत लागत लागे मीत
'शारिका' गुरु-कृपा पद पाये पुनीत ॥

गुरु-कृपा गुरुदात से, गुरु-मुख साधन सार निरणाये
'शारिका' जनम जनम द्विविधा नासे, श्री लछमन गुरु
सरनाये ॥१७॥

(१२९) प्रभु का नाम जपो सुख-सार, नित निरंतर प्राण की धार
प्रान अपान की संधि करो, जप जप नाम दुविधा हरो।
आवत प्राण संग नाम उच्चारो, जावत प्राण जपो निरधारो
आवत जावत दृष्टि राखो, गुरु-गम ज्ञान अन्तर घट भाखो।

नित नित श्वास उश्वास उच्चारो
'शारिका' यही साधन सार को धारो ॥

(१३०) अति श्रद्धा चित्त अति विश्वासा, स्वास उश्वास सुरत की फांसा
सुरत शब्द का करो मेला, नित निरन्तर खेलो खेला।

निज तन-मन ए विधि करो होम, पियो गुरु-शब्द अमीरस सोम
आवत पीयो जावत पीवो, अन्तर बाहिर पी-पी जीवो।

शब्द गुरु का जीवन-पाता
'शारिका' जप जप भई राता ।।

(१३१) तन-मन की सब सुधी गई, गुरु-किरपा आत्म बुद्धि भई
पांच तीन होये लीन, तब घट बाजी सुन्दर बीन।
गगन गुफा में होये राग, अनहद गर्जे भेरी साज
उलट कुएं में ज्योती अनूप, तेल बाती बिन नित भूप।

अमीरस बरसे छम छम छम
'शारिका' ध्वनि होत सोऽहं सोऽहं ।।

(१३२) नैन बिन लखे स्वरूप अलबेला, कोउ विरला गुरुमुख गुरु का चेला
बिन मुख जीवा अमीरस चाखे, अकथ कथा निरधार भाखे।
बिन श्रवण सुने अनहद बाज, जो शिखर महल में रेहा गाज
बिन पग शीश चढे समेर, जाये बीच गुफा में मारे शेर।

राज सुराज पाया त्रैलोकी
'शारिका' परसे गत अलौकी।

(१३३) गत अलोकी निर्वाच्य अनाम, जो अनुभव करे होये निष्काम
परम-प्रकाश में जा समाये, अमीरस रसना नित नित खाये।
अमर लोक में करे बसेरा, गुरु-मुख गुरु का साचा चेरा
अमर भयो अमीरस खाये, ना आये ना अब जाये।

सो केवल पद अद्वैत अनूप
'शारिका' अनुभव करे मिटे भ्रम कूपा ॥

(१३४) बिन श्रद्धा प्रेम और विश्वासा, कबूं ना पाये अनुभव गत रासा
बिन अनुभव ना तृपताये, पढ पढ पोथी सार न पाये।
कोटि जतन करे विध नाना, युगन युग भरमे अनजाना
परमारथ तत परसे नाहीं, कौन काढे भव के मांहीं।

गुरु-शरणागत हो के मीत
'शारिका' तत परमारथ परस पुनीत ॥

(१३५) नाम अनामी परमारथ मूल, जुगत मुकत मेटे मन भूल
परम प्रीत परतीत चित्त धार, प्राण अपान योग तत सार।
अन्तर आती पवन हकारी, बाहर जावे रूप सकारी
हकार साकार गुरु-युक्ति मेल, अगम निगम घट खेला खेल।

ए विध सत साधन साध
'शारिका' गुरु लछमन मन्तर घट अराध ॥

(१३६) नित अकान्त रहे स्वतन्तर, जप जप जीवे गुरु का
मन्तर
चिरकाल तक रहे नित लाग, करे अभ्यास तजे सब राग।
करत करत होत चतुर सुजान, अकस्मात प्रगटे ज्ञान-भान
रोम रोम होवे परकाश, घट-पट का अन्धकार सब नाश।

अलख वाणी का हुआ संचार
'शारिका' लछमन दया परसोसार ॥

निज तन-मन ए विधि करो होम, पियो गुरु-शब्द अमीरस सोम
आवत पीयो जावत पीवो, अन्तर बाहिर पी-पी जीवो।

शब्द गुरु का जीवन-पाता
'शारिका' जप जप भई राता ।।

(१३१) तन-मन की सब सुधी गई, गुरु-किरपा आत्म बुद्धि भई
पांच तीन होये लीन, तब घट बाजी सुन्दर बीन।
गगन गुफा में होये राग, अनहद गर्जे भेरी साज
उलट कुएं में ज्योती अनूप, तेल बाती बिन नित भूप।

अमीरस बरसे छम छम छम
'शारिका' ध्वनि होत सोऽहं सोऽहं ।।

(१३२) नैन बिन लखे स्वरूप अलबेला, कोउ विरला गुरुमुख गुरु का चेला
बिन मुख जीवा अमीरस चाखे, अकथ कथा निरधार भाखे।
बिन श्रवण सुने अनहद बाज, जो शिखर महल में रेहा गाज
बिन पग शीश चढे समेर, जाये बीच गुफा में मारे शेर।

राज सुराज पाया त्रैलोकी
'शारिका' परसे गत अलौकी।

(१३३) गत अलोकी निर्वाच्य अनाम, जो अनुभव करे होये निष्काम
परम-प्रकाश मे जा समाये, अमीरस रसना नित नित खाये।
अमर लोक में करे बसेरा, गुरु-मुख गुरु का साचा चेरा
अमर भयो अमीरस खाये, ना आये ना अब जाये।

सो केवल पद अद्वैत अनूप
'शारिका' अनुभव करे मिटे भ्रम कूपा ॥

(१३४) बिन श्रद्धा प्रेम और विश्वासा, कबूं ना पाये अनुभव गत रासा
बिन अनुभव ना तृपताये, पढ पढ पोथी सार न पाये।
कोटि जतन करे विध नाना, युगन युग भरमे अनजाना
परमारथ तत परसे नाहीं, कौन काढे भव के मांहीं।

गुरु-शरणागत हो के मीत
'शारिका' तत परमारथ परस पुनीत ॥

(१३५) नाम अनामी परमारथ मूल, जुगत मुकत मेटे मन भूल
परम प्रीत परतीत चित्त धार, प्राण अपान योग तत सार।
अन्तर आती पवन हकारी, बाहर जावे रूप सकारी
हकार साकार गुरु-युक्ति मेल, अगम निगम घट खेला खेल।

ए विध सत साधन साध
'शारिका' गुरु लछमन मन्तर घट अराध ॥

(१३६) नित अकान्त रहे स्वतन्तर, जप जप जीवे गुरु का मन्तर
चिरकाल तक रहे नित लाग, करे अभ्यास तजे सब राग।
करत करत होत चतुर सुजान, अकस्मात प्रगटे ज्ञान-भान
रोम रोम होवे परकाश, घट-पट का अन्धकार सब नाश।

अलख वाणी का हुआ संचार
'शारिका' लछमन दया परसोसार ॥

अलख वाणी प्रगट भई, घट अष्टं महल परगासा
'शारिका' लछमन अनुग्रह ते, सब जोव भरम दुःख नासा ॥१८॥

(१३७) ज्ञानं जाग्रत भेद निराला, कोउ अनुभव करे गुरु-मुख गुरु-बाला
सुरत शब्द का करे मेल, दो तलवार इक म्यान दकेल।
प्राण अपान की चौसर खेले, आवत जावत करे कुलेले
उलट प्राण अपान में मेले, अपान उलट प्राण में खेले।

जब प्राण अपान पद पायें समान
'शारिका' तब ही मार्ग खुले उदान ॥

(१३८) पश्चिम घाटी चढे जब मीत, पूर्वदिशा तरवेणी पुनीत
गंग जमन सरस्वती की धारा, कर अश्नान पाया सुख-सारा।
ज्योत जलाई नाद बजाया, गगन गुफा में डेरा लगाया
भंवर गुफा की खुली ताकी, अनाद पुरख की प्रगटी झांकी।

चम चम चम चम होये चमकारा
'शारिका' परम परकाश खुला भंडारा ॥

(१३९) गवन मिटा आनन्द घर पाया, अलख पुरुष का गाना गाया
सर्व कामना पूरण होई, रंचक तृष्णा रही ना कोई।
तृप्त भई मन आसा पूरी, अब चढ बैठी प्रेम खजूरी
मंगलाचार हुआ बहुबारी, आवागमन की मिटी खवारी।

ना कहीं आये ना अब जाई,
'शारिका' श्री चरण-कमल समाई ॥

(१४०) मैं तो कछू ना किया कराया, किरपा कीनी आप प्रभु राया
अति उत्साह स्फूर्तो दोनी, अपने धाम की सूज लखीनी।
आप ही अन्तर भेद लखाया, आप ही अपना रूप प्रगटाया
आप प्रभु सन्मुख हो आई, अपनी छवि अनूप दिखलाई।

अपने चरणी आप ही राखा
'शारिका' अपना ज्ञान आप हो भाखा ॥

(१४१) मेरा मुझ में कछू नाहीं, अपनी किरपा करी गोसांई
भरम मिटाया सार लिखाई, भव-बन्धन की काटी फाई।
अब तो भई स्वतन्तर आप, प्रभु दाते गुरु परताप
कैन कथन में कछू ना आई, जैसी थी वैसी गत पाई।

दया करी गुरु लछमन दातार
'शारिका' को कीना भवपार ॥

(१४२) उठो करो गुरु चरण की सेवा, मार्ग मुक्त का परसो भेवा
निज जीवन कल्याण हेत, जीत लेवो ये जीवन खेत।
नाम सुमिर सुख-सार को पाओ, दुविधा दूर मंगल धर गावो
मानुष जीवन का फल जान, केवल चित्त आये भगवान्।

और काम तेरे कारे नाहीं
'शारिका' सिमर सिमर प्रभु हरदे मांहीं ॥

(१४३) सिमरन को सुध करिये यूं, चन्द चकोर प्रीत चित्त ज्यूं
मीन नीर की प्रीती जैसे, सिमरन में मन राखो तैसे।
ज्यूं पूप संग भंवरे की प्रीत, त्यूं सिमरन की चित्त धारो रीत

पर-धन सिमरे चोर ज्यों मीता, सत-सिमरन में त्यों राखो चीता।

ज्यों भूखा लोचे पदारथ तांई
'शारिका' त्यों मन राखो सुमिरन मांहीं ॥

(१४४) जो विध कामी कामिनी ध्याये, इक पल मन से ना विसराये
निर्धन सिमरे धन के तांईं, त्यों साधक सिमरे प्रभ मन मांहीं।
ज्यों मधुमाखी को मधु से प्यार, ए विध साधक नाम आधार
पल पल सिमरे घट के मांहीं, एक पलक भी विसरे नांही।

सिमर सिमर मन होये तद्रूप
'शारिका' सिमर सिमर प्रभ नाम अनूप ॥

प्रभ का सिमरन सार है, और सकल आसार।
'शारिका' परम-प्रीत चित्त धारके, सिमरो लछमन चरण आधार ॥१६॥

(१४५) प्रभ को सिमरें महा मुनि ज्ञानी, नारद शारद महामुनि मानी
शेष महेष प्रभ को ध्यायें, सिमर सिमर परम गत पायें।
सिद्ध ऋषीश्वर और अवतार, प्रभ सिमरन से भये निस्तार
साध सन्त और गुरु गोसाईं, प्रभ नाम सिमर तद् रूप समाईं।

प्रभ का सिमरन योग निधान
'शारिका' सिमर सिमर गुरु लछमन फरमान ॥

(१४६) देवी देव सकल धियायें, अपरमपार महिमा प्रभ गायें
नर-नारी सब करो विचार, प्रभ का सिमरन है जग सार।
जो भगत भगतनी आये संसार, प्रभ सिमरन से गये भव-पार
परम प्रीत परतीत धियावो, प्रभ सिमर सिमर परमगत पावो।

दम दम सिमरो पल पल गावो
'शारिका' ईश्वर-स्वरूप अनूप ध्यावो ॥

(१४७) योग युगत का यही निधान, सिमरो-सिमरो गुरु-गम ज्ञान
कारण कर्त्ता प्रभ रूप अनूप, जो सुमिरे सो होये तद्रूप।
सोही योगी योग गत पाये, जो सार शब्द तत सार ध्याये
सो ही ध्यानी ध्यान परवीन, जो शब्द ध्यान में रहे लीन।

शब्द का सिमरन शब्द ध्यान
'शारिका' शब्द-ब्रह्म घट खुली खान ॥

(१४८ जिस ध्याया पद पूरन देवा, तिस अनुभव किया सत तत भेवा
परमारथ तत सार को जाता, सत-स्वरूप में भयो अति राता।
ज्ञान ध्यान सब पूरन होया, केवल पद अद्वैत बसोया
सर्व प्रकार तृपती को पाया, जीवन्मुक्त आनन्द पद राया।

यही तो अनुभव गत मीता
'शारिका' गुरु-लछमन चरणी भई पुनीता ॥

(१४९) जब बाजा घट नाद अखंड, गूंज उठा सब पिंड ब्रह्मंड
भुन भुन बाजे अनहद बाज, भेरी बंसरी सकले साज।

गोपियां नाचे नाचे नन्दलाल, ये गत लखे कोऊ गुरु का लाल
यही नर्तकः आत्मा जान, जाको अनुभव सो महामुनि मान।

ईश्वर-स्वरूप गुरु कीनी दाया
'शारिका' तब अनुभव गत पाया ॥

(१५०) अनुभव गत जब भई प्रापत, जनम मरण मिटी सब आपत
सुरती अमीरस भोग करे नित नीत, निर्मल पद में भई अस्थीत।
'ज्ञानं अन्नम्' यही भेद, स्वरूपस्थिति पद निरच्छेद
परम-योगी सो परम ज्ञानी, जाको अनुभव सो परम निर्वाणी।

'शारिका' परमारथ तत सार को पाया
सहायक भये गुरु लछमन राया ॥

(१५१) दया करी दया सिन्धुदाता, भव-बंधन काट कियो रंगराता
भूल मिटी निरशंकपद पाया, अब पाने योग रही नही काया।
काल-करम सब जाल विनासा, श्री चरण-कमल में कीना वासा
जो प्रसन्नता भई घट मांही, सैन बैन वर्णन होये नांहीं।

अडोल अचाहक पद हम पाया
'शारिका' अमर-पुरुष संग अमीरस खाया ॥

(१५२) धुर शिखर पै डेरा कीना, गगन गुफा में आसन लीना
नरक स्वर्ग का किया नबेडा, मिटा जनम मरन गवन का घेडा
अब हम भई परम स्वतन्त्र, काल-करम का मिटा सब यन्त्र

परम गति यह पद अविनाश, अनुभव लखा आया विश्वास ।

गुरु लछमन दयालु भये दयाल
'शारिका' को कीना निहाल ॥

गुरु लछमन ईश्वर-स्वरूप जो, जब मो पै भये दयाल
'शारिका' का भव-बंधन नासा, तब होई परम निहाल ॥

(१५३) नर नारी मैं कहूं विचार, लेओ परम प्रीत से हिरदे धार
यह तत सार परमारथ ज्ञान, अलख पुरुष का सकल विधान
जीवन उन्नति का सत निधान, सर्व जियां हित कल्याण
ये शिव-योग सम तत परकाश, करे पाप विखाद भव-बंधन नाश ।

जो कोई पढे सुने मन लाये
'शारिका' करे निदिध्यास परम पद पाये ।

(१५४) मानुष जीवन दुर्लभ जान, प्राप्त भया हित कल्याण
यां मांही अधिक विवेक, ज्ञान ध्यान बुद्धि विषेख
करम धरम विद्या परधान, धर्म अधर्म में पहचान
या ही बंधन मुक्त का हेत, याही दुःख सुख परम आनन्द का खेत ।

सर्व-समरथ कला या मांहीं
'शारिका' मुक्त होये या बंधन पांही ॥

(१५५) तातें उत्तम जूनी बखानी, मानुष देह परम सुख खानी

करो विचार हे नर-नारी, क्या कारण बने संसारी।
निज जीवन की करो सूज, या में निज आतम को भूज।
पशुवत् ना जीवन खोवो, अपना जीवन साक्षी जोहवो।

ये जीवन समय अति दुर्लभ पाया
'शारिका' या में खोज निज प्रभु राया॥

(१५६) समय गया फिर हाथ न आये, अन्त काल जीव बहु पछताये
मल-मल दोनों हाथ को रोये, जाती बार अन्त क्या होये।
पहले सोच विचार ना कीना, मूढ पने में औध व्यतीना
जिन को अपना सब कछु माना, अन्त में सब हो गये बेगाना।

कोउ साक सबन्ध ना साथ निभाये
'शारिका' अकेला आया अकेला जाये॥

(१५७) जो किया सो भया दुःखरूपा, जो भोगा सो नरक-कूपा
होये अन्त को सब मिथ्या परतीत, देख देख जले तब चीत।
कोउ करम धरम नहिं कारे आया, मोह भरम में परम दुःख पाया
क्या बने अब अन्त की बारी, निज करम गत से भई खवारी।

जम-जाल-व्याल मांहीं घेरा
'शारिका' कौन काटे चुरासी फेरा॥

(१५८) उठो सिमरो नाम तत सार, जो काटे भरम चौरासी धार
आवत जावत सिमरो मीत, उठत बैठत नाम परतीत।

दम दम सिमरो घट के मांहीं, एक पलक भी विसरो नांहीं
सिमर सिमर तद्रूप समाओ, परम आनन्द घर सहजे पावो।

ये ही मारग मुक्त की कूंजी
'शारिका' नाम-रत्न परम-धन पूंजी ॥

(१५९) यही भक्ती योग साधन सार, मन तन तृप्ते या ही आधार
नाम का सिमरन नाम ध्यान, ये सत सिमरन योग-ज्ञान।
इस ते परे ना साधन कोय, जो भव-बंधन जीव का खोये
यही शिव-योग कहलाये, अष्टांगयोग पातंजल गाये।

ये सब सिद्धों का साधन सार
'शारिका' कहे लछमन योग-आचार ॥

(१६०) किरपा करी गुरु लछमनदाता, परगट भया ज्ञान सुखदाता
गृहस्थी विरक्ति होये नर नारी, बाल वृद्ध या ब्रह्मचारी।
जो परम जिज्ञासा मन में धारे, इस मारग में सोही पधारे
सदाचारी मन होये वैरागी, शिव योग में सो जन लागी।

जीवनभाव मलन त्रै नासे
'शारिका' परमपद मांहीं निवासे ॥

'शारिका' बोध प्रगट भया, गुरु लछमन ईश्वर-स्वरूप परताप
जो परम प्रीत निदिध्यास करे, भव-बंधन मिटे संताप।



शारिका सर्व सहायक सर्व का दाता, नारायण सुख देव
कर्त्ता हर्त्ता सब जग धरता, साखी पुरुष निरभेव ॥१॥

शारिका चार खानी वाणी चार, चार युग विस्तारा
पाँच तत्त्व की रचना रच, तिस में बसा निरंकारा ॥२॥

शारिका सोई तत अनूप है, जानन पूजन योग
गुरु लछमन अनुग्रह ते, कर तिस का निज घट भोग ॥३॥

सिमरो सिमरो निज घट मांही, ध्यान धरो निज अन्तर
परम प्रीत परतीत से, ध्यावो नित गुरु मन्त्र ॥४॥

शारिका राम नाम तत सार सो, परम शिव स्वरूप
योग युगत से सोध बोध, परसें आनन्द कूप ॥५॥

शारिका घट परगट भया, तत आतम स्वरूप निर्वाण
आस वास तृष्णा मिटी, पद परसा कल्याण ॥६॥

शारिका कहे सुनो नर-नारी, अति दुर्लभ यह विचार
राम नाम सिमरन करो, भव से होये निस्तार ॥६॥

राम नाम को सिमर के, बहु पापी तरे संसार
नीच ऊंच पद पाये गये, गुरु लछमन चरणाधार ॥८॥

शारिका ढोल बजय के, कहे सुनो नर नार
मानव देह दुर्लभ है नहि, मिले यह बारंबार ॥६॥

निज आतम राम पहचानो; जो साखी सत स्वरूप
जाको घट में परस ते, शारिका भई तदरूप ॥१०॥

शारिका कहे सुनो नर नारी, करो शताबी (जल्दी) सुद्ध
जीवन सरिता बह गई, क्यों हो रहे बेबुद्ध ॥११॥

होश करो परमाद तजो, उठो होवो सुचेत
पांच मृग भये मतवाले, उजाड रहे तेरा खेत ॥१२॥

शारिका काल बजावत बाज, ताक में बैठा तोरी
शीघ्र होवो सुचेत, मारे तोहे चोरी चोरी ॥१३॥

शारिका राजे रंक फकीर, काल ने सब को खाया
कोउ नाही पाये छूट, जो देह धर जग आया ॥१४॥
चार युगन को अवधि, जो तूं शारिका पाये
आकाश-पाताल में छुप, काल तोहे पकड ले जाये ॥१५॥
रंचक चलत नही चतुराई, शारिका काल के आगे
सब योधा बली गये हार, अन्त को गये अभागे ॥१६॥
माया फेर सकल संसार है, सब गुनी मुनी भरमाये
शारिका गुरु लछमन अनुग्रह, कोउ विरला ही बच पाये
॥१७॥

शारिका मन माया दो नही, यही भरम संसार
मन मरे माया कहां, कर के देखो विचार ॥१८॥
शारिका इच्छा ही से मन है, इच्छा बिन मन नांहीं
मन माया दोनों मरें, जब इच्छा नही घट मांहीं ॥१९॥
शारिका सर्व रोग की औषधी, केवल नाम तत सार
सिमरो सिमरो प्रेम से, गुरु गम ध्यान चित्त धार ॥२०॥
इक चित्त होके सिमरिये, इक चित्त धरिये ध्यान
शारिका गुरु लछमन कृपा तें, जीव पाये कल्याण ॥२१॥
शारिका मन माया का रोग विनासे, जब परगटे ज्ञाननिरधार
परम शान्त पद घर पाये, गवन मिटे संसार ॥२२॥

'शारिका' क्या भरम में लाग रही, तज यह कूढ पसार
यह तो जन्म मरण काल दुःख फाही, सब हव्यमान ससार
॥२३॥

शारिका जो दृष्टि में आवता, सो सब काल-स्वरूप
अदृष्ट अकाल निज आत्मा, जो घट घट बसा अनूप ॥२४॥
तिसका सिमरण ध्यान ताही का, शारिका नित चित्त धार
प्रगटे ज्ञान-स्वरूप जब, तब परसें पद निरधार ॥२५॥
जहां काल भय भरम नहीं, शारिका ना दुःख दोष संसार
केवल आनन्द आनन्द ही, परमानन्द तत सार ॥२६॥
शारिका सोही सत धाम है, सत खंड अमर लोक
जामे जाये बोउ ना आये, सो पद निर्वाच अलोक ॥२७॥
शारिका गुरु कृपा से परसिये, पद अगम अगाध अनूप
गुरु शरणागत होये रहो, निज मन मारके भूप ॥२८॥
सो दयालु निज दया करें, निज दे के चरणाधार
शारिका तब ही परसिये, गुप्त भेद घट अपार ॥२९॥
शारिका भेद को पायके, निर भेद तत को बूझे
पर्दा उठे जब बीच का, तब निज स्वरूप घर सूझे ॥३०॥

शारिका साधक सिद्ध होये, जब विरह विराग मन राखे
गुरु शरणागत होय के, गुरु गम ज्ञान घट भाखे ॥३१॥
ज्ञानं अन्नं भेद को, शारिका तब निर्णाये
जब सार शब्द तत सार को, निज घट में अनुभव पाये ॥३२॥
शारिका तीन अवस्था काफूर होये, चौथी घट परगासे
लीन रहे नित तिस में, सब आवागमन विनासे ॥३३॥

या ही त्रिषु चतुर्थं तैलवद् आसीचम् , कोउ विरला जन
निर्णये

शारिका जो उठत बैठत, सोवत जागत, घट सुरत निरत
लव लाये ॥३४॥

शारिका सुरत निरत लव लीन होये, तब नर्तकः आत्म जान
परम प्रकाश भयो घट मोहि, जीव भयो निर्वाण ॥३५॥

शारिका ना आये ना अब जाये, नित अमीरस करे पान
जनम मरण भय रोग विनासा, गुरु मेहर पाई कल्याण ॥३६॥

कोउ करने योग रही ना कार, शारिका पूरण भये सब काज
आस वास काफूर भई, पाया त्रिलोकी का राज ॥३७।

शारिका गुरु बिन ज्ञान न होय, कल्याण नहीं गुरु बिन होता
पढ पढ पोथी ग्रन्थ, मूरख निज जीवन खोता ॥३८॥

शारिका गुरूरुपायः जान, कथ यह पूरण साचा
गुरुशरणागत होय के, नित चरण-कमल रहो राचा ॥३९॥

गुरु दया-दृष्टि जब करें, पात निज शक्ति करते
निज दे के चरणाधार, भव-बंधन सब हरते । ४०॥

शारिका नित करो गुरु की सेव, सब तन-मन-धन लगाये
यही गुरुरुपायः जान, जासे मुक्त पद पाये ॥४१॥

शारिका लोक-लाज सब त्याग के, चलो सत-मारग मांहीं
भय भरम नाश सब नाश होये, आवागमन रहे नाहि ॥४२॥

दुष्ट-करमन से मन रोको, सत करमों में लागो
शारिका अन्तर बाहर होये निरमला, सुख-सार पायें
बढ भागों ॥४३॥

जब लग निर्मल करम ना होयें, नहि निर्मल पायें सार
पाप विकार मलिन महि नासे, शारिका जीव पाये आज्ञार
॥४४॥

शारिका सत-साधु को सेवा, और सेवा संसार
जो धारे अति प्रेम से, सो परसे सुख-सार ॥४५॥

साध सेवा हरि कीरतन, से दुर्लभ मारग सहज
शारिका ध्यारये नित ही, सब मिटे भरम का पाज
(पाखंड) ॥४६॥

साध सेवा बिन शारिका, सर्व जतन बेकार
तीरथ बरत योग-साधना, कर कर जाये हार ॥४७॥

साध सन्त की सेवते, सब पाप-विकार विनासें
शारिका धारो धारो प्रेम से, शांत पदारथ खासें ॥४८॥

साध सेवा जिन जन करी, सो तरगें भव-पार
शारिका ओड गवन नहि आवते, तिन महिमा गाये संसार
॥४९॥

तन-मन-धन से सेविये, साध चरण नित नीत
शारिका निष्काम भाव सेवा करो, पद परसें परम पुनीत ।५०।

'शारिका' बिन सेवा सत-पुरुष की, बिन सिमरण सत
करतार
लाखों जतन करे जो चाहे, नहि रंचक पाये सुख-सार ॥५१॥

शारिका सर्व सुखों की खान है, सत सिमरण नाम दातार
परम प्रीत से सिमरिये, खोयें पाप दोष सब छार ॥५२॥

'शारिका' जीवन होये स्वतन्त्र, सत सिमरण के परताप

गुरु-गम ज्ञान चित्त धारिके, नित उठ सिमरो परभात ॥५३॥

'शारिका' यही आगम का मारग, यह चाबी सत खंड़ धाम
जुगत मुकत तत-सार यह, गुरु-गम ज्ञान निधान ॥५४॥

'शारिका' यही प्रयत्न: साधक:, दम दम घट के मांही
दिवस रैन नित सिमरे, करे और कार कउ नाहिं ॥५५॥

'शारिका' यही सत-साधना, यही मारग तत्त्व-ज्ञान
सूझ बूझ धारण करो, पल में होये कल्याण ॥५६॥

ज्ञान ध्यान की सार है, सार शब्द निज सार
गुरु - गम - ज्ञान गुरु की कृपा, शारिका करे निस्तार ॥५७॥

पढ पढ पोथी बन गये, सिमरन ध्यान बिन ज्ञानी
'शारिका' सार तत्त्व अनुभव नहीं, नित भरमे चौरासी खानी ॥५८॥

'शारिका' सार-तत्त्व अनुभव बिना, कथनी कथे बकवाद
गुरु गोसांई बन गये, मूरख जन साध ॥५९॥

जब सार-तत्त्व अनुभव हुआ, फिर क्या पढन पढान
बिन अनुभव के शारिका, सब ही विरथा जान ॥६०॥

कथनी कथ कथ मर गये, चारों युग बेकार
करनी करके तर गये, 'शारिका' गुनी अपार ॥६१॥

करनी से हो पाइये, सार तत्त्व घट ज्ञान
'शारिका' बिन करनी के मानव, जानो पशु समान ॥६२॥

शारिका कथनी कथ कथ मर गये, घट पाया न रंचक भेद
आप डूबे भव-सागर मांहि, जग को दीना खेद ॥६३॥

शारिका सत करनी चित्त धारिके, निज घट करिये खोज
जब परसे तत सार को, तब परसें जीवन मौज ॥६४॥

'शारिका' भजन भगवान बिन, मनवां नित नित प्यासा
सार-तत्त्व अनुभव होये, तब पूरण होयें सब आसा ॥६५॥

शारिका करत करत अभ्यास, मूढ होत चतुर सुजान
तृप्त होये घट मांहि परस के तत्त्व - ज्ञान ॥६६॥

तत्त्व-ज्ञान सब भूख मिटावे, मेटे सब मन प्यासा
अगम कथा कथे शारिका, जब होवे ज्ञान भान परगास ॥६७॥

प्रभु किरपा गुरु-सन्त मिला, परसा अगम निगम का भेद
जुगत मुकत साधन किया, शारिका मिटा सब खेद ॥६८॥

शारिका दृश्यं शरीरं सूत्र, तब निर्णाया सार
घट घट वासी निज घट जाता, शिव साक्षी सर्वाधार ॥६९॥

करतम बुद्धि विनास हुई, अकरतम भाव परगासा
शारिका केवल स्वरूप में, कीना नित निवासा ॥७०॥

चिन्तन इच्छा शुन भई, शुन करम गति पाई
वीत-राग विदेह पद पाया, शारिका निज स्वरूप समाई
॥७१॥

'शारिका' कहन कथन में आये नांहीं, ना लेखनी का विषय
जान
अनुभव को गत है यह, घट अनुभव से पहचान ॥७२॥

बिना त्याग वैराग के, बिना विरह की आग
बिन सत-जुगत निदिध्यास सत, लागत नहि घट जाग
॥७३॥

'शारिका' मन की कल्पत कल्पना, जतन जतन करो त्याग

दया करें गुरु लछमन दाता, तब जाग लगे बढभाग ॥७४॥

मम भाव सब मिटे शारिका, अहंभाव हुए लीन
जनम मरण दुःख होये विनाश, गुरु लछमन चरण आधीन ॥७५॥

शारिका यह विश्वास धरो मन मांहि, रहो चरण लव लाग
करत करत अभ्यास के, घट उठे आत्मा जाग ॥७६॥

मन वाणी सब लीन होये, देह करम सब लीन
सर्व दोख दु.ख दूर भये, शारिका निज स्वरूप विलीन ॥७७॥

शारिका दुर्मत रोग जीव को लागा, दुर्कर्म करे दिन रात
गवन दोख दुःख परसे, छूट नही कबूं पात ॥७८॥

जनमे मरें नित बारंबार, ऊँच नीच योनि भरमाये
शारिका बिन तत्त्व ज्ञान प्राप्ति, नित नित दुःख अधिकाये ॥७९॥

विचार-हीन सत करम बिहूना, शान्त मारग न जाने
शारिका पकड पकड गुरु राह दिखायें, तो भी सूझ ना पाने ॥८०॥

अन्धकारी को सूजत नांहि, सत-जीवन की राह
अलू के नयनन अन्धकार भरा, शारिका सूरज करे क्या ॥८१॥

थोडा फटा तो दरजी सीवे, आसमान फटा क्या होये
शारिका अन्धकारी घट घना अन्धकार, गुरु पटक पटक सिर रोये ॥८२॥

जब लग घट नहि सोधता, तब लग सरे ना काज
शारिका बहिर मुख भ्रमत रहे, मिटे ना भरम का पाज (पखंड) ॥८३॥

शारिका निज घट सोध बोध री, क्या ग्रन्थ पन्थ में खोज
सार-तत्त्व अनुभव बिना, पशुवत ढोये बोझे ॥८४॥

शारिका तरक वितरक क्या करे, क्या मुख थूक बिलोये
दूध मथे माक्खन निकसे, पानी मथे क्या होये ॥८५॥

शारिका पोथी पढ पढ कर मर गये, पाई न रंचक[1] सार
ज्यूं मूरत में सागर लख लख, प्यासा मरे संसार ॥८६॥

निज घट खोजो शारिका, मैं नित नित देत दुहाई
पढन पाठन त्याग के, करो साधन अधिक अधिकाई ॥८७॥

दम दम सिमरो पल पल ध्यावो, घट ध्यान करो नित नीत
शारिका दिवस रैन लाग रहो, गुरु चरण शरण परतीत ॥८८॥

पांच[2] को मारो पांच[3] संग, पांच[4] का होवे परगास
शारिका दो तीन मत भेद विनासे, करे केवल घर में वास ॥८९॥

सब भय भरम काफूर होये, जब परसें घट तत सार
तब चार छः अठारंह परे, शारिका बसे निरधार ॥९०॥

उठो करो निज कल्याण, शारिका या जीवन के मांहीं
क्यों सोई पांव पसार, जीवन यह रहना नाहीं ॥९१॥

सब संग हिल मिल रहो, नित वार्त्ता मीठी भाखो
शारिका सबको उत्तम जान, आत्मा सब निज लाखो ॥९२॥

सन्मान करो अभिमान तजो, सब का हेत[5] विचारो

---

१. थोडा सा।
२. काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार।
३. सादगी, सत्य, सेवा, सत्संग, ईश्वर-चिन्तन।
४. निष्काम, निर्वाणता, उदासीनता, निश्चलता, समता।
५. हितकार।

शारिका सब की सेवा कर, लोभ मोह अपना टारो ॥९३॥

करो सादा नित आहार, मांस मदिरा सब त्यागो
शुद्ध सात्त्विक अन्न खाओ, शारिका कहत बडभागो ॥९४॥
हनन करो ना कहू जीव का, ना लूट लूट जियां खावो
शारिका शुद्ध करो व्यवहार निज, नित पर-उपकार कमाओ
॥९५॥

शारिका सत बोलो सत पढो, नित सत का करो निदिध्यास
पाप-विकार सकल दुःख जायें, घट-बुद्धि होये परगास ॥९६॥
सत-संगत सत साधु सेवा, सुनिये तत्त्व ज्ञान इतिहास
शारिका सत विराग चित्त उपजे, पायें गुरु-गम-ज्ञान सुख-
रास ॥९७॥

शारिका गुरु-गम-ज्ञान निदिध्यासिये, पलक पलक घट मीत
परमारथ तत सार परकाशे, परसें सत खंड धाम पुनीत
॥९८॥

शारिका गवन चकर रहे ना बाकी, स्थिर भयो घट चीत
गुरु साहिब लछमन क्रिपा करी, सब मिल गया भरम पलीत
(मलीन) ॥९९॥

तन मन रोम रोम हर्षित भया, शारिका होई निहाल
लछमन गुरु दातार ने, सब काट लिया भव-जाल ॥१००॥
यह वाणी अगम अगोचर, शारिका अलख अनूप परगासी
जो पढे सुने करे निदिध्यास, सो गुरु लछमन धाम निवासी
॥१०१॥



कश्मीर देश अनूप है प्रगट वैकुण्ठधाम
ऋषि मुनि देवी देव, कई सन्त करें विसराम ।।१।।

पूत भूमि अति रमणीक यह, जहां शिव शक्ति का भास
कषप-ऋषि परयास[१] ते, कश्मीर भयो परगास[२] ।।२।।

श्रीनगर वोढ[३] धाम है, अति मन मोदक रूप
वज़ीरबाग बस्ती बसी, जो सुन्दर महा अनूप ।।३।।

जियालाल सोपोरी थे, कश्मीरी पण्डित बहूभारी
पतिव्रता विचारवान थी, तिन की राधकारानी ।।४।।

बड़ी तेजस्वी पर उपकारन, निर्मल तिन सोभाव
साध-सेवक हरिभगत, शुभ कर्मण मन-चाव ।।५।।

शुभ उन्नीस चोहत्तर विक्रमी, शुभ मगरमास जान
शुभ शुक्लपक्ष तेथ द्वितीया, शुभ ब्रह्म मुहूर्त महान ।।६।।

भाग उदय प्रभु कृपा कीनी, शुभ मास घडी दिन आया
शारिका तिन की गोद में, अवतार गति गत पाया ।।७।।

भई प्रसन्नता मची दोहाई, वस्तो नगर के मांहीं
नर-नारी सब वृद्ध जवान, विदाई देवन आई ।।८।।

धन जननी राधिकारानी, जिन किया जगत उपकार
जुगन जुग तिन महिमा गाई, लोकां लोक नर नारी ।।९।।

द्वादस बरस की भई शारिका, चित्त आया परम वैराग
प्रभु प्रेम में भई दीवानी, प्रचण्ड हुई विरह आग १०।।

---

१. प्रयास
२. प्रकट
३. बडा

खान पान सकल विसराया, मिटी जगत मन प्यास
व्याकुल हुई चैन न आये, केवल पिया की आस ॥११॥
त्रयोदश वर्ष करी प्रभु कृपा, मिला गुरु बड सन्त
ईश्वर-स्वरूप लछमण चरणी, लीन भई मन मन्त ॥१२॥
जुगत मुकत गुरु मुक्तता पाई, ईश्वर-स्वरूप करी दात
भ्रम भटकना सब मिट गई, जीवन भयो सुख दात ॥१३॥
सब करम धरम पूरण भया, पूरण भई मन आस
गर्भ-चक्र सब नाश हुआ, शारिका भई अविनास ॥१४॥
गुरु साहब लछमन जू, परम पुरुष शिव स्वरूप
शारिका तिन की दया दृष्टि से, पद परसा निर्मल अनूप ॥१५॥



दि नार्मल प्रस, श्रीनगर